प्रकाशककी ओरसे

राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षा परीक्षा-समितिके मन्तव्यानुसार यह पुस्तक 'राष्ट्रभाषा कोविद' परीक्षाके लिये तैयार की गयी थी। अिसके संग्रहकर्ता हैं श्री हरिहर शर्मा और श्री मुरलीधर सबनीस।

अिस कार्यमें श्री हृषीकेश शर्मा और श्री रामेश्वर दयाल दुबेसे काफी सहायता मिली है।

जिन सहृदय लेखकोंकी कहानियाँ अिसमें ली गयी हैं, अुन सबके हम कृतज्ञ हैं। 'पनघट' कहानी पाठ्यक्रमसे हटाअी गअी है अिसलिये अिस संग्रहमें वह संग्रहीत नहीं की गअी है। अिस पुस्तककी छपाअीमें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन द्वारा स्वीकृत स्वरोंके नये रूपोंका अपयोग किया गया है।

१-१-'४९ मन्त्री

सूची

कहानियोंका विकास

कोई भी समाज जब स्थायी रूपको प्राप्त करने लगता है तब सामाजिक परिस्थितिको निर्देशित करनेके लिये और समाजकी साहित्यिक कृति-शक्तिका परिचय देनेके लिये कहानियोंका निर्माण होता है। लड़कोंको सिखानेकी दृष्टिसे तथा मनोरंजनके साथ-साथ अपने अनुभवकी शिक्षा देनेके लिये समाजके बुजुर्गोंने कहानियाँ गढ़ी हैं। कअी अेक कहानियाँ वास्तविक घटनाको लेकर ही अुठती हैं। सामान्यत: अैसा कहा जा सकता है कि कहानियोंका मूल अुद्देश्य प्रारंभिक ज्ञान-विकासको सहायता देते हुअे सामाजिक आदर्श तथा वास्तविक जीवनसे परिचय करा देना है।

प्राचीन कालमे कहानियोंका मूल अुद्देश्य अुपदेश देना था। परंतु धीरे धीरे अुसेंम लोक-संग्रह, मनोरंजन, धार्मिक शिक्षा, हॅसी और अैतिहासिक घटनाओंके संकलनका भी समावेश होने लगा। सबसे प्राचीन ग्रंथ वेदोंमें भी संवादके रूपमे कअी कहानियोंका संग्रह किया गया है। कहानी-साहित्यकी दृष्टिमें ये आख्याअिकाअे अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। बौद्ध तथा जैन धर्मग्रंथोंमें भी दृष्टांतके तौरपर अनेक आख्यायिकाओंका समावेश किया गया है। बौद्धोंकी ‘जातक’ कथाअें कहानी-साहित्यमें अपना अेक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, जैनोंके नंदीसूत्र भी कम महत्वके नहीं हैं।

दार्शनिकोने गहन विषयोंको समझानेके लिये और अपने सिद्धांतोंको प्रमाणित करनेके लिये अिन आख्याअिकाओंका प्रयोग किया है। आगे चलकर अपना विषय समझानेके लिये विषयके अनुरूप कहानियोंका प्रयोग करना अेक प्रथा-सी हो गया। अिसी वजहसे कहानीके सूत्र तथा तंत्रमें खूब अुन्नति हुअी और पशु-पक्षी, मनुष्यके अंग, भूत-प्रेत, जड़-चेतन, सबको

कहानीका आलम्बन व अुपकरण बननेका सौभाग्य मिला। स्वाभाविकताका कुछ भी ख्याल न रखकर ये कहानियाँ गढ़ी गयीं। हँसना, रुलाना, मनोरंजन करना और व्यावहारिक जीवनमें आदमीको कुशल बनाना, यही अिनकी अुपयोगिता थी।

वेद तथा अुनके अुपांगोंमें व अन्य दार्शनिक ग्रंथोंमें जो कहानियाँ पायी जाती हैं वे कहानीके विकासकी प्राथमिक अवस्था दिखाती हैं। हमारे सामने कहानीके संग्रहके रूपमें बौद्धोंका जातक ग्रंथ आता है। 'जातक' कहानियोंके संबंधमें अनेक मत प्रचलित हैं। अैसा कहा जा सकता है कि प्राचीन आर्यकथाओंका जातकके रूपमे अेक सुंदर परिष्कृत संस्करण निकाला गया। जातक--कथाओंका असर मध्य अेशियाकी सभी कहानियोंके अूपर पड़ा हुआ पाया जाता है। जातकके साथ-साथ धर्मकी विभिन्न धाराओंका समर्थन करनेके लिये जो ग्रंथ पाली और प्राकृतमें लिखे गये अुनमे भी संस्कृत कहानियोंका अच्छी तरहसे विकास हुआ। महाभारतकी छोटी-मोटी आख्यायिकाअें और पुराण-ग्रंथोंकी कहानियाँ, ये तो अेक दृष्टिसे कहानी-संग्रह ही हैं। 'पचतंत्र' 'हितोपदेश' अित्यादि संस्कृतके प्रसिद्ध कथा-ग्रंथोंका अपभ्रंश भाषाओंमे प्रयोग किया गया तथापि, अिसके अलावा भी, हर-अेकमें अपना अपना अलग कहानी-संग्रह था। अीसाकी पहली शताब्दीमें पैशाची भाषामें बृहत्कथा रचना हुअी, जिसका बादमें संस्कृतमें अनुवाद किया गया।

'पंचतंत्र' वगैरह कथाओंका अरबी और फारसीमें अनुवाद हुआ है। परन्तु बृहत्कथाका अनुकरण करके 'सहस्र रजनी' (अरेबियन नाअिट्स) की कथाओंका संकलन किया गया। अिन सभी संग्रहोंमें यह विशेषता पायी जाती है कि किसी अेक व्यक्तिको प्रधान केन्द्र बनाकर, समाजमें प्रचलित अनेक विचारों, कल्पनाओं तथा प्रथाओंको सजाकर सुचारु रूपमें लोगोंके सामने पेश किया गया है।

संस्कृत साहित्यमें अिस तरहका अंतिम संकलन 'दशकुमार चरित्र' है। अिसमें भारतीय कहानी साहित्यके अपूर्व विस्तारका परिचय हमें मिलता है। परन्तु साथ-ही साथ कहानीके मूल अुद्देश्योंमे सामाजिक परिस्थितिके अनुसार जो परिवर्तन होने लगे अुनकी भी तनिक झाँकी मिलती है। पहले साहस धर्मके लिये होता था। बादमें स्वार्थ और लौकिक अुन्नतिके लिये अुसका चित्रण किया गया। कुट-चातुरी, छल-प्रवचना, आदि अुपायोसें लौकिक विजय प्राप्त करना अिनका अेकमेव हेतु दिखायी देता है। यात्रा और शिक्षा आदिका भी अिनमें समावेश किया गया है। सारांश, दशकुमार-चरित्र वर्तमान कालकी यूरोपियन साहसिक कहानियोंके ढंगपर लिखा गया है।

अिन कहानियोंमे कहीं कहीं लोक-चरित्रकी तीव्र आलोचना तथा नीति और व्यंगकी प्रधानता भी पाअी जाती है। अपभ्रंश भाषाओंका कहानी-साहित्य अभी तक अप्राप्य है। अगर अुनका पता लग जाय तो वर्तमान कहानी-साहित्यकी ओर अग्रसर होते हुये कहानी-तंत्रका विकास कैसे हुआ, अिसका पता लग जाता।

हिंदीमें पहले पहल संस्कृतके 'बेतालपच्चीसी' 'सिंहासनबत्तीसी' 'शुकबहत्तरी' आदि ग्रंथोंका अनुवाद किया गया। किन्तु हिंदीमें कहानीका सच्चा विकास खड़ी बोलीके साहित्यके विकासके साथ साथ यानी अुन्नीसवीं शताब्दीमें 'रानी केतकी की कहानी' (१८०३) से हुआ है। ये कहानियाँ तो अेक खिलवाड़-सी मालूम पडती हैं। परंतु अिसीको लेकर सवा सौ वर्षोंमें हिंदी कहानी-साहित्यमें अितना विकास कैसे हुआ, यह हम भली भाँति जान सकते हैं।

अुन्नीसवीं शताब्दीके मध्यतक कहानियोंके अितिहासके संबंधमें कोअी विशेष अुल्लेखनीय बात नहीं हुअी। पौराणिक और धार्मिक संस्कृत कथाओंका हिंदीमें अनुवाद होता रहा। अिसके बाद 'राजा भोजका सपना' नअी भाषा व नया साँचा लेकर हिंदी संसारके सामने आया।

भारतेंदुके समयमें बँगला और अंग्रेजी साहित्यके हिंदीमें अनुवाद होने लगे 'लेम्ब्ज़ टेल्स' का अनुवाद अिसी समय प्रकाशित हुआ। सन् १९०० में 'सरस्वती' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। वर्तमान हिंदी साहित्यकी ओर देखते हुअे मानना पड़ेगा कि कहानी-युगके अिस नये खज़ानोंका निकास 'सरस्वती' द्वारा किया गया है। शुरूमें अंग्रेज़ी कहानियोंका छायानुवाद अिसमें प्रकाशित किया जाता था, जिससे कहानियोंके प्रति पाठकोंकी रुचि बढ़ी। फिर भी मौलिक लेखकोंका अिस वक्त अभाव था। वर्तमान युगकी मौलिक कहानियोंकी बुनियाद श्री जयशंकर प्रसादजीने डाली। प्रसादजी अुत्कृष्ट कवि और गद्यलेखक भी थे। अतअेव आपकी कहानियोंमें भावुकता ओतप्रोत है। 'बिसाती' और 'आकाशदीप' आपकी कलाका अेक उत्कृष्ट नमूना है। प्रसादजीकी स्फूर्तिको लेकर ही श्री विश्वभंरनाथजी जिज्ञा, श्रीविश्वंभर नाथ 'कौशिक', बख्शी आदिने कहानियाँ लिखी है। श्री राजा राधिकारमण सिंहकी 'कानोंमें कंगना' कहानी अपने ढंगकी पहली है, जिसने कहानी-संसारमें अेक नयी धारा शुरू की। १९१५ तक सामान्यतः सभी कहानियाँ घटना-प्रधान थीं। १९१६ मे स्वर्गीय प्रेमचंदकी पहली कहानी 'सरस्वती'-मे निकली। अिसके बाद कहानियोंका अुद्देश्य केवल घटनाअे लेकर ही आगे बढ़ना न रहकर अब मानवी मनके सभी व्यापारोंको सुलझानेकी ओर अग्रसर हुआ है। अब वास्तववादी कहानियोंको भी स्थान मिल रहा है।

कहानी-कलाके संबंधमें यहाँ थोड़ा-सा अुल्लेख करना अनुचित न होगा।

कहानीका सबसे अधिक साम्य उपन्यासके साथ है; किंतु अिनमे अंतर भी कम नहीं है। कहानी और अुपन्यासमें केवल आकारका ही नहीं, प्रकारका भी अंतर है। कहानी छोटी और अुपन्यास बड़ा होता है। अिसलिये यह न समझ लेना चाहिये कि छोटे उपन्यासको कहानी और बड़ी कहानीको अुपन्यास कह सकते हैं। वास्तवमें मुख्य अंतर यह है कि कहानीमें एक ही

प्रधान तथ्य रहता है, उपन्यासमें एकसे अधिक। कहानी जीवनकी एक घटना, अेक मर्मस्थलको अंकित करती है, समूचे जीवनको चित्रित करना अुसका काम नहीं। विस्तार सीमित होनेके कारण अुसमे अेक भी अनावश्यक वाक्य या शब्द न होना चाहिये। सीमित शब्दोंमें अेक तथ्यको चित्रित कर देना यानी कहानी लिखना अुपन्यास लिखनेकी अपेक्षा कहीं अधिक कठिन है।

कहानीका शीर्षक अुपयुक्त और अुसके अुद्देश्यका सूचक होना चाहिये; पर वह स्पष्ट न होकर प्रच्छन्न रूपमे होना चाहिये। कहानीमें पाठककी अुत्सुकता और आकर्षणको अंततक बनाये रखना अत्यंत आवश्यक है। अिसलिये कथा-वस्तु, वर्णन, कथोपकथन, सभी कुछ आकर्षक होना चाहिये। प्रत्येक वाक्य किसी पात्रका संक्षिप्त चरित्र-चित्रण करता हुआ अुस प्रधान तथ्यकी ओर संकेत करनेवाला होना चाहिये जो कहानीका अुद्देश्य होता है।

यद्यपि कहानी-द्वारा जीवन-संबंधी प्रश्नोंका अुत्तर देना तथा अुपदेश देना कुछ लेखकोंके अनुसार कहानीका अुद्देश्य होता है; पर मुख्यतः अुसका अुद्देश्य मनोरंजन ही है। मनोरंजनकी हत्या करके अुपदेश देना सर्वथा अनुचित है।

कहानीका अंत भी अत्यंत सावधानीसे करना चाहिये। पाठककी अुत्सुकता कहानीके समाप्त होनेतक बराबर बनाये रखनी चाहिये।

आधुनिक कहानियाँ बहुत कुछ कलाकी श्रेणीमें आ गयी हैं, अिसलिये अुनमे स्वाभाविकताके साथ साथ हृदयके आन्तरिक विचारोंका चित्रण करना अत्यंत आवश्यक होगया है। अैसा स्वाभाविक चित्रण ही हृदयस्पर्शी होता है। हृदयके आंन्तरिक विचारोंके चित्रण करनेमें लेखकको मनोविज्ञानसे भली भाँति परिचित रहना चाहिये। पात्रके जीवनमें डूबकर ही लेखक अुसके विचारोंको स्पष्ट कर सकता है। घटना-प्रधान कहानियोंका भी

महत्व है किंतु हृदयके विचारोंका स्वाभाविक चित्रण करनेवाला, आन्तरिक दवंद्वको व्यक्त करनेवाली कहानिया ही आजकल कलाकी दृष्टिसे अुत्तम मानी जाती ह।

कुछ लोगोंका कहना है, कि वास्तववाद और आदर्शवाद दोनोंको आधारभूत मानकर अुपन्यास, गल्प आदिकी रचना करना चाहिये। कहानी-साहित्यका क्षेत्र सिर्फ मनोरंजन ही है, अैसा माननेवालोंकी संख्या भी कुछ कम नहीं है। आदर्शवाद, वास्तववाद और 'कलाके लिये कला' वाद आदि सभी वादोंका असर आजके कहानी-साहित्यपर हुआ है।

हमने जिन कहानियोंका संग्रह किया ह वे कला व भाषाकी दृष्टसे प्रतिनिधिरूप हैं। हमारा क्षेत्र सीमित रहनेकी वजहसे सभी प्रमुख लेखकोंकी रचनाओंको हम स्थान नहीं दे सके हैं। प्रांन्तीय भाषाओंकी जिन कहानियोंका अनुवाद हो चुका है अुनमेंसे भी हमने कुछ कहानियाँ प्रतिनिधिरूपमें अिस संग्रहमें ली हैं

—संकलनकर्ता

कहानी-संग्रह-भाग ३

बिसाती

अुद्यानकी शैलमालाके नीचे अेक हरा भरा छोटा-सा गाँव है। वसन्तका सुन्दर समीर अुसे आलिंगन करके फूलोंके सौरभसे अुसके झोंपड़ोंको भर देता है। तलहटीके हिम-शीतल झरने अुसको अपने बाहु-पाशमें जकड़े हुअे हैं। अुस रमनीय प्रदेशमें अेक स्निग्ध संगीत निरन्तर चला करता है, जिसके भीतर बुलबुलोंका कलनाद, कम्प और लहर अुत्पन्न करता है।

दाड़िमके लाल फूलोंकी रंगीली छाया संध्याकी अरुण किरणोंसे चमकीली हो रही थी। शीरीं अुसीके नीचे शिलाखण्ड पर बैठी हुअी सामने गुलाबोंकी झुरमुट देख रही थी जिसमें बहुत-से बुलबुल चहचहा रहे थे; समीरणके साथ छल-छलैया खेलते हुअे आकाशको अपने कलरवसे गुंजरित कर रहे थे।

शीरींने सहसा अपना अवगुंठन अुलट दिया। प्रकृति प्रसन्न हो हँस पड़ी। गुलाबोंके दलमें शीरींका मुख राजाके समान सुशोभित था। मकरन्द मुँहमें भरे दो नील-भ्रमर अुस गुलाबसे अुड़नेमें असमर्थ थे। भौंरोंके पर निस्पन्द थे। कँटीली झाड़ियोंकी कुछ परवाह न करते हुअे बुलबुलोंका अुनमें घुसना और अुड़ भागना शीरीं तन्मय होकर देख रही थी।

अुसकी सखी ज़ुलेखाके आनेसे अुसकी अेकान्त-भावना भंग हो गयी। अपना अवगुंठन अुलटते हुअे ज़ुलेखाने कहा—"शीरीं, वह तुम्हारे हाथोंपर बैठ जानेवाला बुलबुल आजकल नहीं दिखाअी देता ?"

आह खींचकर शीरींने कहा—"कड़े शीतमें अपने दलके साथ मैदानकी ओर निकल गया। वसन्त तो आ गया, पर वह नहीं लौट आया।"

"सुना है कि ये सब हिन्दुस्तानमें बहुत दूर तक चले जाते हैं। क्या सच है शीरीं ?"

"हाँ प्यारी ! अिन्हें स्वाधीन विचरना अच्छा लगता है। अिनकी जाति बड़ी स्वतंत्रता-प्रिय है।"

"तूने अपनी घुँघराली अलकोंके पाशमें अुसे क्यों न बाँध लिया ?"

"मेरे पाश अुस पक्षीके लिये ढीले पड़ जाते थे।"

"अच्छा, लौट आयेगा, चिन्ता न कर। मैं घर जाती हूँ।"

सीरींने सिर हिला दिया।

ज़ुलेखा चली गयी।

* * *

जब पहाड़ी आकाशमें सन्ध्या अपने रँगीले पट फैला देती, जब विहंग केवल कलरव करते पंक्ति बाँधकर अुड़ते हुअे गुंजान-झाड़ियोंकी ओर लौटते और अनिलमें अुनके

कोमल परोंसे लहर अुठती, जब समीर अपनी झोंकेदार तरंगोंसे बार-बार अन्धकारको खींच लाता, जब गुलाब अधिकाधिक सौरभ लुटाकर हरी चादरमें मुँह छिपा लेना चाहते थे तब शीरींकी आशा-भरी दृष्टि कालिमासे अभिभूत होकर पलकोंमें छिपने लगी। वह जागते हुअे भी अेक स्वप्नकी कल्पना करने लगी।

हिन्दुस्तानके अेक समृद्धिशाली-नगरकी अेक गलीमें अेक युवक पीठपर गट्ठर लादे घूम रहा है। परिश्रम और अनाहारसे अुसका मुख विवर्ण है; थककर वह किसीके द्वारपर बैठ गया है। कुछ बेचकर अुस दिनकी जीविका प्राप्त करनेकी अुत्कंठा अुसकी दयनीय बातोंसे टपक रही है परन्तु वह गृहस्थ कहता है "तुम्हें अुधार देना हो तो दो, नहीं तो अपनी गठरी अुठाओ। समझे आगा?"

युवक कहता है—"मुझे अुधार देनेकी सामर्थ्य नहीं।"

"तो मुझे भी कुछ नहीं चाहिये।"

शीरीं अपनी अिस कल्पनासे चौंक अुठी। काफिलेके साथ अपनी सम्पत्ति लादकर खैबरके गिरि-संकटको वह अपनी भावनासे पादाक्रान्त करने लगी।

अुसकी अिच्छा हुअी कि हिन्दुस्तानके प्रत्येक गृहस्थके पास वह अितना धन रख दे कि वह अनावश्यक होनेपर भी अुस युवककी सब वस्तुओंका मूल्य देकर अुसका बोझ अुतार दे। परन्तु सरल शीरीं निस्सहाय थी। अुसके पिता अेक क्रूर पहाड़ी सरदार थे। अुसने अपना सिर झुका लिया। कुछ सोचने लगी।

सन्ध्याका अधिकार हो गया। कलरव बन्द हुआ। शीरींकी साँसोंके समान समीरकी गति अवरुद्ध हो अुठी। अुसकी पीठ शिलासे टिक गयी।

दासीने आकर अुसको प्रकृतिस्थ किया। अुसने कहा—"बेगम बुला रही हैं। चलिये, मेंहदी आ गयी"

महीनों हो गये। शीरींका व्याह अेक धनी सरदारसे हो गया। झरनेके किनारे शीरींके बागमें शवरी खिंची है। चलचला पवन अपने अेक-अेक थपेड़ेमें सैकड़ों फूलोंको रुला देता है। मधु-धारा बहने लगती है। बुलबुल अुसकी निर्दयतापर क्रन्दन करने लगते हैं। शीरीं सब सहन करती रही। सरदारका मुख अुत्साहपूर्ण था। सब होनेपर भी वह अेक सुन्दर प्रभात था।

अेक दुर्बल व लम्बा युवक पीठपर गट्ठर लादे सामने आकर बैठ गया। शीरींने अुसे देखा, पर वह किसीकी ओर देखता नहीं; अपना सामान खोलकर सजाने लगा।

सरदार अपनी प्रेयसीको अुपहार देनेके लिये काँचकी प्याली और काश्मीरके सामान छाँटने लगे।

शीरीं चुपचाप थी अुसके हृदय-काननमें कलरवोंका क्रन्दन हो रहा था। सरदारने दाम पूछा। युवकने कहा—"मैं अुपहार देता हूँ; बेचता नहीं। ये विलायती और काश्मीरी सामान मैंने चुनकर लिये हैं। अिनमें मूल्य ही नहीं हृदय भी लगा है। ये दामपर नहीं बिकते।"

सरदारने तीक्ष्ण स्वरमें कहा—"तब मुझे न चाहिये, ले जाओ, अुठाओ।"

"अच्छा, अुठा ले जाअूँगा। मैं थका हुआ आ रहा हूँ थोड़ा अवसर दीजिये, मैं हाथ-मुँह धो लूँ।"—कहकर युवक भरभरायी आँखोंको छिपाते हुअे अुठ गया।

सरदारने समझा, झरनेकी ओर गया होगा। विलम्ब हुआ पर वह न आया। गहरी चोट और निर्मम व्यथाको वहन करते कलेजा हाथसे पकड़े हुओ, शीरीं गुलाबकी झाड़ियोंकी ओर देखने लगी। परन्तु असकी आँसू-भरी आँखोंको कुछ न सूझता था। सरदारने प्रेमसे असकी पीठपर हाथ रखकर पूछा—" क्या देख रही हो ? "

" मेरा अेक पालतू बुलबुल शीतमें हिन्दुस्तानकी ओर चला गया था। वह लौटकर आज सबेरे दिखलाअी पड़ा। पर जब वह पास आ गया और मैंने असे पकड़ना चाहा, तो वह अधर कोहकाफकी ओर भाग गया! " शीरींके स्वरमें कम्प था, फिर भी वे शब्द बहुत सँभलकर निकले थे। सरदारने हँसकर कहा—" फूलोंको बुलबुलकी खोज ? आश्चर्य है। "

बिसाती अपना सामान छोड गया, फिर लौटकर नहीं आया। शीरींने बोझ तो अुतार लिया, पर दाम नहीं दिया।

प्रायश्चित्त

अगर कबरी बिल्ली घर-भरमें किसीसे प्रेम करती थी तो रामूकी बहूसे, और अगर रामूकी बहू घर-भरमें किसीसे घृणा करती थी तो कबरी बिल्लीसे। रामूकी बहू, दो महीना हुआ मायकेसे प्रथम बार ससुराल आयी थी, पतिकी प्यारी और सासकी दुलारी, चौदह वर्षकी बालिका। भंडार-घरकी चाबी अुसकी करधनीमें लटकने लगी, नौकरोंपर अुसका हुक्म चलने लगा, और रामूकी बहू घरमें सब कुछ; सासजीने माला ली और पूजा,-पाठमें मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्षकी बालिका, कभी भंडार-घर खुला है तो कभीघरमें बैठे बैठे सो गयी। कबरी बिल्लीको मौका मिला, घी-दूधपर अब वह जुट गयी। रामूकी बहूकी जान आफतमें और कबरी बिल्लीके छक्के-पंजे। रामूकी बहू हाँड़ीमें घी रखते रखते ऊँघ गयी और बचा हुआ घी कबरीके पेटमें। रामूकी बहू दूध ढँककर मिसरानीको जिन्स देने गयी और दूध नदारद। अगर यह बात यहीं तक रह जाती तो भी बुरा न था, कबरी रामूकी बहूसे कुछ अैसी परक गयी थी, कि रामूकी बहूके लिये खाना पीना दुश्वार। रामूकी बहूके कमरेमें रबड़ीसे भरी कटोरी पहूँची और रामू जब आये तब कटोरी साफ चटी हुअी। बाज़ारसे बालाअी आयी और जब तक रामूकी बहूने पान लगाया, बालाअी गायब। रामूकी बहूने तय करलिया कि या तो वही घरमें रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोर्चाबन्दी हो गयी और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसानेका कटघरा आया, अुसमें दूध, बालाअी, चूहे, और भी बिल्लीको स्वादिष्ट लगनेवाले विविध प्रकारके व्यंजन रखे गये, लेकिन बिल्लीने अुधर निगाह तक न डाली। कबरीने सरगर्मी दिखलायी। अभी तक तो वह रामूकी बहूसे डरती थी; पर अब वह साथ लग गयी, लेकिन अितने फ़ासिलेपर कि रामूकी बहू अुसे हाथ न लगा सके।

कबरीके हौसले बढ़ जानेसे रामूकी बहूको घरमें रहना मुश्किल हो गया। अुसे मिलती थीं सासकी मीठी झिड़कियाँ, और पतिदेवको मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

अेक दिन रामूकी बहूने रामूके लिये खीर बनायी। पिस्ता बादाम, मखाने और तरह-तरहके मेवे दूधमें औटे गये, सोनेका वर्क चिपकाया गया और खीरसे भरकर कटोरा कमरेके अेक अैसे ऊँचे ताकपर रखा गया जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामूकी बहू अिसके बाद पान लगानेमें लग गयी।

अुधर कमरेमें बिल्ली आयी, ताकके नीचे खड़े होकर अुसने अूपर कटोरेकी ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताककी अूँचाअी अन्दाजी और रामूकी बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामूकी बहू सासजीको पान देने चली गयी और कबरीने छलाँग मारी। पंजा कटोरेमें लगा और कटोरा झनझनाहटकी आवाजके साथ फ़र्शपर।

आवाज़ रामूकी बहूके कानमें पहुँची। सासके सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूलका कटोरा टुकड़े टुकड़े, खीर फ़र्शपर और बिल्ली डटकर खीर अुड़ा रही है। रामूकी बहूको देखते ही कबरी चम्पत।

रामूकी बहूपर खून सवार हो गया, न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। रामूकी बहूने कबरीकी हत्यापर कमर कस ली। रात-भर अुसे नींद न आयी। किस दाँवसे कबरीपर वार किया जाय कि फिर ज़िन्दा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुअी और वह देखती है कि कबरी देहरीपर बैठी बड़े प्रेमसे अुसे देख रही है।

रामूकी बहूने कुछ सोचा, अिसके बाद मुस्कराती हुअी वह अुठी। कबरी रामूकी बहूके अुठते ही खिसक गयी। रामूकी बहू अेक कटोरा दूध कमरेके दरवाजेकी देहरीपर रखकर चली गयी। हाथमें पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूधपर जुटी हुअी है। मौक़ा हाथमें आ गया। सारा बल लगाकर पाटा अुसने बिल्लीपर पटक दिया। कबरी न हिली न डुली, न चीखी न चिल्लायी, बस अेकदम अुलट गयी।

आवाज़ जो हुअी तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोअी छोड़कर और सास पूजा छोड़कर, घटना-स्थलपर

अुपस्थित हो गयी। रामूकी बहू सर झुकाये हुअे अपराधिनीकी भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली—"अरे राम, बिल्ली तो मर गयी। माजी, बिल्लीकी हत्या बहूसे हो गयी; यह तो बुरा हुआ।"

मिसरानी बोली—"माजी, बिल्लीकी हत्या और आदमीकी हत्या बराबर है। हम तो रसोअी न बनायेंगी, जब तक बहूके सिर हत्या रहेगी।"

सासजी बोली—"हाँ, ठीक तो कहती हो अब जब तक बहूके सरसे हत्या न अुतर जाय तब तक न कोअी पानी पी सकता है, न खाना खा सकता है। बहू यह क्या कर डाला?"

महरीने कहा—"फिर क्या हो, कहो तो पण्डितजीको बुलाय लायी?"

सासकी जान-में-जान-आयी—"अरे हाँ, जल्दी दौड़के पण्डितजीको बुला ला।"

बिल्लीकी हत्याकी खबर बिजलीकी तरह पड़ोसमें फैल गयी। पड़ोसकी औरतोंका रामूके घरमें ताँता बँध गया। चारों तरफसे प्रश्नोंकी बौछार और रामूकी बहू सिर झुकाये बैठी।

पण्डित परमसुखको जब यह खबर मिली अुस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही वे अुठ पड़े। पण्डिताअिनसे मुस्कराते हुअे बोले—"भोजन न बनाना। लाला घासीरामकी पतोहूने बिल्ली मार डाली। प्रायश्चित्त होगा, पक्वानोंपर हाथ फिरेगा।"

पण्डित परमसुख चौबे छोटे-से-मोटे-से आदमी थे। लम्बाअी चार फीट दस अिञ्च और तोंदका घेरा अठ्ठावन अिञ्च। चेहरा गोल मटोल मूछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुअी।

कहा जाता है कि मथुरामें जब पंसेरी खुराकवाले पण्डितोंको ढूँढ़ा जाता था तो पण्डित परमसुखजीको अुस लिस्टमें प्रथम स्थान दिया जाता था।

पण्डित परमसुख पहुँचे, और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी—सासजी, मिसरानी, किसनूकी माँ, छन्नूकी दादी और पण्डित परमसुख। बाकी स्त्रियाँ बहूसे सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनूकी माँने कहा—"पण्डित, बिल्लीकी हत्या करनेसे कौन नरक मिलता है?"

पण्डित परमसुखने पत्रा देखते हुअे कहा—"बिल्लीकी हत्या अकेलेसे तो नरकका नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत भी जब मालूम हो, जब बिल्लीकी हत्या हुअी तब नरकका पता लग सकता है।"

"यही कोअी सात बजे सुबह।"—मिसरानीजीने कहा।

पण्डित परमसुखने पत्रेके पन्ने अुलटे, अक्षरोंपर अुँगलियाँ चलायीं, मत्थेपर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरेपर धुँधलापन आया। माथेपर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया—"हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्राह्म-मुहुर्तमें। बिल्लीकी हत्या! घोर कुम्भीपाक नरकका विधान है। रामूकी मा, यह तो बड़ा बुरा हुआ।"

रामूकी माँकी आँखोंमें आँसू आ गये। "तो फिर पण्डितजी, अब क्या होगा, आप ही बतलायें।"

पण्डित परमसुख मुस्कराये—"रामूकी माँ, चिन्ताकी कौन सी बात है, पुरोहित फिर कौन दिन के लिये हैं? शास्त्रमें प्रायश्चित्तका विधान है सो प्रायश्चित्तसे सब कुछ ठीक हो जायगा।"

रामूकी माँने कहा—"पण्डितजी, अुसीलिये तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाय?"

"किया क्या जाय? यही अेक सोनेकी बिल्ली बनवाकर बहूसे दान करवा दी जाय। जब तक बिल्ली न दे दी जायगी तब तक तो घर अपवित्र रहेगा, बिल्ली दान देनेके बाद अिक्कीस दिनका पाठ हो जाय।"

छन्नूकी दादी—"हाँ और क्या, पण्डितजी तो ठीक कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाय और पाठ फिर हो जाय।"

रामूकी माँने कहा—"तो पण्डितजी, कितने तोलेकी बिल्ली बनवायी जाय?"

पण्डित परमसुख मुस्कराये, अपनी तोंदपर हाथ फेरते हुअे अुन्होंने कहा—"बिल्ली कितने तोलेकी बनवायी जाय? अरे रामूकी माँ, शास्त्रोंमें तो लिखा है कि बिल्लीके वजन-भर सोनेकी बिल्ली बनवायी जाय। लेकिन अब कलयुग आ गया है, धर्म-कर्मका नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामूकी माँ, बिल्लीके तौल-भरकी बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस-अिक्कीस सेरसे कमकी क्या होगी? हाँ, कम-से-कम

अिक्कीस तोलेकी विल्ली बनवाके दान करवा दो, और आगे तो अपनी अपनी श्रद्धा !"

रामूकी माँने आँखें फाड़कर पण्डित परमसुखको देखा—"अरे बाप रे ! अिक्कीस तोला सोना ! पण्डितजी, यह तो बहुत है, तोला—भरकी विल्लीसे काम निकलेगा ?"

पण्डित परमसुख हँस पड़े—"रामूकी माँ, अेक तोला सोनेकी विल्ली ! अरे रुपयेका लोभ बहूसे बढ़ गया ? बहूके सिर बड़ा पाप है—अिसमें अितना लोभ ठीक नही !"

मोल तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोलेकी विल्लीपर ठीक हो गया।

अिसके बाद पूजा-पाठकी बात आयी। पण्डित परमसुखने कहा-"अुसमें क्या मुश्किल है, हमलोग किस दिनके लिये हैं ? रामूकी माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजाकी सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।"

"पूजाका सामान कितना लगेगा ?"

"अरे, कम-से-कम सामानमें हम पूजा कर देंगे, दानके लिये करीब दस मन गेहूँ, अेक मन दाल, मन-भर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पसेरी घी, और मन-भर नमक भी लगेगा। बस, अितनेसे काम चल जायगा।

"अरे बाप रे ! अितना सामान पण्डितजी, अिसमें तो सौ-डेढ सौ रुपया खर्च हो जायगा।" रामूकी माँने रुआँसी होकर कहा।

"फिर अिससे कममें तो काम न चलेगा। बिल्लीकी हत्या कितना बड़ा पाप है, रामूकी माँ! खर्चको देखते वक्त पहिले बहूके पापको तो देख लो। यह तो प्रायश्चित्त है, कोअी हँसी खेल थोड़े ही है? और जैसी जिसकी मरजादा, प्रायश्चित्तमें अुसे वैसा खर्च भी करना पड़ता है। आपलोग कोअी अैसे-वैसे थोड़े हैं, अरे डेढ़ सौ रुपया आपलोगोंके हातका मैल है।"

पण्डित परमसुखकी बातसे पंच प्रभावित हुअे। किसनू की माँने कहा—"पण्डितजी ठीक कहते हैं बिल्लीकी हत्या कोअी अैसा-वैसा पाप तो नहीं—बड़े पापके लिये बड़ा खर्च भी चाहिये।"

छन्नूकी दादीने कहा—"और नहीं तो क्या, दान-पुन्नसे ही, पाप कटते हैं। दानपुन्नमें किफायत ठीक नहीं?"

मिसरानीने कहा—"और फिर माँजी, आपलोग बड़े आदमी ठहरे, अितना खर्च कौन आप लोगोंको अखरेगा?."

रामूकी माँने अपने० चारों ओर देखा—सभी पंच पण्डितजीके साथ। पण्डित परमसुख मुस्करा रहे थे। अुन्होंने कहा—"रामूकी माँ, अेक तरफ तो बहूके लिये कुम्भीपाक नरक है और दूसरी तरफ तुम्हारे जिम्मे थोड़ा-सा खर्चा है। सो अुससे मुँह न मोड़ो।"

अेक ठंडी साँस लेते हुअे रामूकी माने कहा—"अब तो जो नाच नचाओगे, नाचना ही पड़ेगा।"

पण्डित परमसुख ज़रा कुछ विगड़कर बोले—"रामूकी माँ! यह तो खुशीकी वात है, अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो—"मैं चला।" अितना कहकर पण्डितजीने पोथी पत्रा बटोरा।

"अरे पण्डितजी, रामूकी माँके कुछ नहीं अखरता-बेचारीको कितना दुख है—बिगड़ो न।" मिसरानी, छन्नूकी दादी और किसनूकी माँने अेक स्वरमें कहा।

रामूकी माँने पण्डितजीके पैर पकड़े—और पण्डितजीने अब जमकर आसन जमाया।

"और क्या हो ?"

"अिक्कीस दिनके पाठके अिक्कीस रुपये और अिक्कीस दिन तक दोनों वक्त पाँच पाँच ब्राह्मणोंको भोजन करवाना पड़ेगा।" कुछ रुककर पण्डित परमसुखने कहा—"सो अिसकी चिन्ता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करनेसे पाँच ब्राह्मणके भोजनका फल मिल जायगा।"

"यह तो पण्डितजी ठीक कहते है, पण्डितजीकी तोंद तो देखो।"–मिसरानीने मुस्कराते हुअे पण्डितजीपर व्यंग किया।

"अच्छा, तो फिर प्रायश्चित्तका प्रबन्ध करवाओ रामूकी माँ ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं अुसकी बिल्ली बनवा लाअूँ। दो घण्टेमें मैं बनवाकर लौटूंगा। तब तक पूजाका प्रबन्ध कर रखो—और देखो, पूजाके लिये..."

पण्डितजीकी बात खतम भी न हुअी थी कि महरी हाँफती हुअी कमरेमें घुस आयी, और सब लोग चौंक अुठे। रामूकी माँने घबड़ाकर कहा—"अरी क्या हुआ री ?"

महरीने लड़खड़ाते स्वरमें कहा—"माँजी, बिल्ली तो अुठकर भाग गयी !"

कविका त्याग

रात आधीसे अधिक बीतीं चुकी थी। आकाशपर तारोंकी सभा सुसज्जित थी। कवि अुन्हें देखता था और सोच सोचकर कुछ लिखता जाता था। वह कभी लेटता, कभी बैठता, कभी टहलता, और कभी जोशसे हाथोंकी मुट्ठियाँ कसकर रह जाता था। वह कविता लिख रहा था।

अिसी प्रकार रात्रि समाप्त हो गयी, परन्तु कविका गीत अभी अधूरा था। सूर्योदयकी लाली देखकर अुसपर निराशा-सी छा गयी, मानो वे अुसके जीवनके अंतिम क्षण हों। अुस समय अुसका मुख कुम्हलाया हुआ फूल था। आँखें अुजड़ी हुअी सभा। कभी वह अपने गीतको देखता, कभी आकाशको; अुसका हृदय प्रातःकालके प्रकाशमें रात्रिके अंधकारको खोजता था, जिसमें तारे मुस्कराते थे, और मन्द चाँदनी अपनी क्षीण किरणोंके लम्बे लम्बे हाथ बढ़ाकर सोती हुअी सृष्टिके अचेत मास्तिष्कों पर सुन्दर स्वप्नोंसे जादू करती थी। वह अिस जादूका गीत लिख रहा था। परन्तु अब प्रातःकाल हो चुका था। अकस्मात् कविके मस्तिष्कमें अेक विचार अुत्पन्न हुआ। अुसने कागज पेंसिल ली, और चल पड़ा। वहाँ अेकांत था। अुसने अपने हृदयके अन्धकारको बाहर निकाल, और अुस काल्पनिक अन्धकारमें गीतको पूरा किया। अुस समय अुसे अैसी प्रसन्नता हुअी मानो कोअी राज्य मिल गया हो। अपने गीतको वह वार वार पढ़ता था और झूमता था। गाता था और प्रसन्न होता था। अैसा जान पड़ता था जैसे किसी बच्चेको सुन्दर रंगीन खिलौने मिल गये हों।

लाला अमरनाथ विद्यारसिक मनुष्य थे, पूरे 'अप्टुडेट' अुनसे और कविसे अतिशय मेल-मिलाप था। कवि निर्धन था और साथ ही यह कि ब्याह भी कर चुका था। अुसको अेक लड़का था. दो लड़किया। प्रायः चिंतित रहता परन्तु जीवनकी बहुतसी आवश्यकताओंके होनेपर भी अुसे कोअी काम करना अिष्ट न था। वह अिसमें अपनी मानहानि समझता था। प्रायः कहा करता– "लोग कैसे मूर्ख है, थर्मामीटरसे हल्का काम लेना चाहते हैं।" लाला अमरनाथ अुसकी कवितापर लट्टू थे। कभी अुसकी कविताका अेक पद भी सुन लेते तो मस्त होकर झूमने लगते। धनाढ्य पुरुष थे, रुपये पैसेकी कुछ परवा न थी। वे अुदारतासे कविकी सहायता किया करते थे। अिसमें अुन्हें हार्दिक आनन्द प्राप्त होता था।

कविने अुन्हें देखा. तो आँखोंमें रौनक आ गयी, श्रद्धा भावसे बोला–"अेक गीत लिख रहा था।"

"क्या शीर्षक है!"

"चन्द्र-लोक!"

"वाह वाह! शीर्षक तो बहुत अच्छा है, देखूँ कैसा लिखा है।"

कविने गीत लाला अमरनाथके हाथमें दे दिया और रुक रुककर कहा—"सारी रात जागता रहा हूँ।"

"हूँ"

लाला अमरनाथने कविता पढ़ी तो उनके आश्चर्यकी थाह न थी।

अुन्होंने कविताकी सैकड़ों पुस्तकें देखी थीं। बीसों कवियोंसे अुनका परिचय था, परन्तु जो कल्पना जो सौन्दर्य जो प्रभाव अिस कवितामें था, वह अिससे पहले देखनेमें न आया था। वे अपने आपमें मग्न हो गये। कागज अुनके हाथोंमें काँपने लगा। अुन्होंने कविकी ओर श्रद्धा-भरी दृष्टिसे देखा, मानो वह कोअी देवता है; और आनन्दके जोशमें काँपते हुअे कहा—" कवि ! "

२

कवि अुनकी अवस्थाको समझ गया। अुसे अपनी आत्माकी गहराअियोंमें सच्चे आनन्द और अभिमानका अनुभव हुआ। अुसने धड़कते हुअे हृदयसे अुत्तर दिया—" जी ! "

"यह कविता तुम्हारी है ?"

कविको अैसा जान पड़ा जैसे किसीने गाली दे दी हो। लज्जाने मुँह लाल कर दिया। अुसने अेक विचित्र कटाक्षसे लाला अमरनाथकी ओर देखा, और बोला—"हाँ मेरी है।"

"मैंने अैसी कविता आज तक नहीं देखी -"

कविका मस्तिष्क आकाशपर था। अिससमय अुसे अैसा प्रतीत हुआ मानो संसार अपनी अगणित जिह्वाओंसे अुसकी कविताकी प्रशंसा कर रहा है। तथापि अुसने धीर भावको न छोड़ा। मनुष्य जो सोचता है, प्रायः अुसे प्रकट करनेको ओछापन समझता है। कविने सिर झुकाया और अुत्तर दिया—" यह आपका बड़प्पन है। "

लाला अमरनाथने जोशसे कहा—" बड़प्पन है ? नहीं। मैं तुम्हारी अनुचित प्रशंसा नहीं करता। तुम सचमुच अिस योग्य हो। तुम अपने गुणोंसे अपरिचित हो। परन्तु मेरी

दूरदर्शी आँखें साफ देख रही हैं कि कीर्ति तुम्हारी ओर बड़े वेगसे दौड़ती हुअी आ रही है। और वह समय अति निकट है जब सफलता तुम्हारेलिये अपने सुवर्ण-द्वार खोल देगी; विस्मित न हो, आश्चर्य न करो। कवि, तुम वास्तवमें कवि हो। तुम्हारी कल्पना गगन-मण्डलकी ॲूचाअियों को छूती है, और तुम्हारा ज्ञान प्रकृतिकी नाअीं विस्तृत है। नवीनता तुम्हारी कविताका सौंदर्य है, और प्रभाव अंग-विशेष है। मैं सच कहता हूँ, तुम्हारी कवितापर लोग हठात् वाह-वाह करेंगे, और संसार तुम्हारा आदर करनेको विवश होगा।"

प्रशंसाके वचन साहस बढ़ानेमें अचूक औषधिका काम देते हैं। कविने अभिमानसे सिर ॲूचा किया, और कहा—"मैंने अैसे गीत और भी तैयार किये हैं।"

"कितने?"

"अिससे पहले ग्यारह बना चुका हूँ। यह बारहवाँ है।"

लाला अमरनाथपर जैसे किसीने जादू कर दिया। अुसको अैसी प्रसन्नता हुअी, जैसे किसी निर्धनको दबा हुआ ख़ज़ाना मिल गया हो। बच्चोंकी-सी अधीरतासे बोले—"वे कहाँ हैं?"

कविने अुत्तर दिया—"घरपर हैं।"

"चलो, मैं अभी देखना चाहता हूँ।"

कविका शरीर रात-भर जागनेसे चूर-चूर हो रहा था। परन्तु कविताके दिखलानेके शौक़ने थके हुअे पैरोंको पर लगा दिये। दोनों अुड़ते हुअे घर पहुँचे। लाला अमरनाथने गीत देखे तो सन्नाटेमें आ गये, जैसे कोयलेमें हीरे मिल गये हों। वे कविपर मुग्ध थे और अुसकी कवितापर लट्टू।

परन्तु अुनको यह आशा न थी कि कवि अितनी अुच्च कोटिपर पहुँच गया होगा। वह 'दर्पण' नामक अेक अत्युत्तम सचित्र मासिक-पत्र निकालनेके विचारमें थे। कविकी कवि-ताअें देखकर यह विचार पक्का हो गया, जोशमें बोले—"दर्पण, तुम्हें कीर्तिकी पहली पंक्तिमें स्थान दिलायेगा।"

कविके मस्तिष्कमें आशाकी किरणका प्रकाश हुआ, जैसे अँधेरी रातमें बिजली चमक जाती है। अुसने सहर्ष धड़कते हुअे हृदय और काँपते हुअे हाथोंसे गीत अमरनाथके हाथमें दे दिये।

३

अिससे दूसरे दिन कवि सोकर अुठा तो कमरमें दर्द था। परन्तु बेपरवाही कवियोंका अेक विशेष अंग है। अुसने अिस ओर तनिक भी ध्यान न दिया और मानवीय प्रकृतिपर विचार करनेमें लग गया। वह ग्रंथोंके पढ़नेकी अपेक्षा अिस गौरवको बहुत मानता था। अिस प्रकार दो-चार दिन बीत गये। दर्द बढ़ता गया। यहाँतक कि लेटना और बैठना कठिन हो गया। कविको कुछ चिंता हुअी। भागा-भागा वैद्यके पास पहुँचा, पता लगा फोड़ा है। वैद्यने मरहम लगानेको दिया। परन्तु अुससे भी कुछ लाभ न हुआ। यहाँ-तक कि रातको सोना भी कठिन हो गया। अुस समय कविको विचार आया, किसी डॉक्टर कुँवर सेनके पास पहुँचा। डॉक्टर साहब लाला अमरनाथके मित्रोंमेंसे थे। अुन्होंने बड़े परिश्रमसे फोड़ा देखा, और चिंतित-से होकर बोले—"आपने बड़ी बेपरवाही की, यह 'कारबंकल' है।"

लाला अमरनाथने चौंककर कहा—"वह क्या होता है?"

"अेक सख्त किस्मका फोड़ा।"

"अुसका अुपाय भी कुछ है या नहीं ?"

डॉक्टर साहब कुछ देर चुप रहे, और फिर अुत्तर दिया—

"केवल अेक अुपाय है। मरहमसे यह अच्छा न होगा।"

कविने अधीर होकर पूछा—"क्या ?"

"ऑपरेशन।"

कविकी आँखोंके सामने मौत फिर गयी। घबराकर बोला—"ऑपरेशन सख्त तो नहीं ?"

"मैं आपको धोखेमें रखना नहीं चाहता। ऑपरेशन सख्त है। यदि आप पहले आ जाते, तो यह अितना भयानक रूप न धारण करता।"

लाला अमरनाथका मुख इन्द्रधनुषकी मूर्ति था। घबराकर बोले—"क्या अिसके सिवा और कोअी अुपाय नहीं ?"

"कोअी नहीं।"

"तो ऑपरेशन करवा देना चाहिये ?"

"अवश्य और जल्दी। साधारण विलम्ब भी हानि पहुँचा सकता है।"

लाला अमरनाथने पूछा—"ऑपरेशन किससे करवाना अुचित होगा ?"

"मेरे विचारमें सरकारी अस्पताल सबसे अच्छा स्थान है।"

लाला अमरनाथने कविकी ओर करुणा-दृष्टिसे देखकर कहा—

"तो करवा लो।"

कवि तनकर खड़ा हो गया, मानो अुसको साहसने पैरों-तले कुचल डाला। अिस समय अुसके मुखपर निर्भयताके चिन्ह थे। बाहरसे बोला—"साधारण बात है। ऑपरेशन ऐसी अनोखी बात तो नहीं रही। प्रतिदिन होते रहते हैं।"

और वह दूसरे दिन ऑपरेशन रूममें मेजपर लेटा हुआ था।

४

अेकाअेक सर्जन साहब घबराये हुअे बाहर निकले। अमरनाथका कलेजा धड़कने लगा। अुन्होंने आगे बढ़कर पूछा—"साहब, ऑपरेशन हो गया?"

सर्जनके मस्तकसे पसीनेकी बूँदें टपक रही थीं—"तुम अुसका कौन होता है?"

"मैं अुसका मित्र हूँ। अुसका क्या हाल है?"

"हार्ट फ़ेल हो गया!"

अमरनाथपर जैसे बिजली गिर पड़ी, चिल्लाकर बोले—"क्या कहा आपने?"

"माने! अुसका हार्ट फ़ेल हो गया। दिलका धड़कना रुक गया।"

"तो वह मर गया?"

"बस! हमको यह 'होप' न था।"

कविकी स्त्री सुशीला अमरनाथसे कुछ दूर खड़ी थीं, यह सुनकर पास आ गयीं, और रोती हुअी बोलीं—"भाअी, मुझे धोखेमें न रक्खो; जो बात हो, साफ़ साफ़ कह दो।"

अमरनाथका कविसे हार्दिक प्रेम था। वे अुसे अिस प्रकार चाहते थे, जैसे भाअी भाअीको चाहता है। और अितना ही नहीं, अुन्हें अुससे बड़ी बड़ी आशाअें थीं। प्रायः

सोचा करते थे, यह भारतवर्षका नाम निकालेगा। अिसकी कविता टैगोर और अनातोले फ्रांसके समान है। वे जब अुसकी 'चन्द्र-लोक' को देखते तब मतवाले हो जाते थे। अिस समय सर्जनके शब्दने अुनके कलेजेपर अंगारे रख दिये थे। अुनको अेकाअेक विश्वास न आया कि कवि सचमुच मर गया है। अुन्होंने रेतकी दीवार खड़ी की। अुनकी स्त्रीके प्रश्नका अुत्तर न दिया, और दौड़ते हुअे कमरेमें घुस गये। कवि मेज़पर लेटा हुआ था और सर्जन निराशाके साथ सिर हिला रहा था। रेतकी दीवार गिर गयी। अमरनाथके हृदय-पर कटारें चल गयीं। सोचने लगे, कैसा सुन्दर तारा था, किन्तु अुदय होनेसे पहले ही अस्त हो गया। अिससे क्या क्या आशाअें थीं, सब धूलमें मिल गयीं। सुना था, पवित्र और पुण्यात्मा जीव अिस पापमय जगत्में अधिक समयतक नहीं ठहरते। अिस समय अिसका समर्थन हो गया।

अमरनाथ बाहर निकले, तो मुखपर सफ़ेदी छा रही थी। सुशीला सामने आयी, वह निराशाकी मूर्ति थी। अुसकी आँखें अिस प्रकार खुली थीं मानो आत्माकी सारी शक्तियाँ आँखोंमें अिकट्ठी होकर किसी बातकी प्रतीक्षा कर रही हों। अुसने अमरनाथको देखा; तो अधीर होकर बोली—
"बोलो, क्या हुआ ?"

अमरनाथकी आँखोंमें आँसू आ गये। सुशीलाको अुत्तर मिल गया। अुसने अपने दोनों हाथ सिरपर दे मारे, और वह पछाड़ खाकर पृथ्वीपर गिर गयी।

अमरनाथ और भी घबरा गये। सुशीलाको सुध आयी, तो अुसने आकाश सिरपर अुठा लिया। अुसका करुण विलाप अमरनाथके घावोंपर नमकका काम कर गया। अुनका साहस न हुआ कि अुसकी ओर देख सकें। अुसका रुदन

हृदयको चीर देनेवाला था, जिसको सुनकर अुनकी आत्मा थर्रा अुठी। अुन्होंने जेबसे सौ रुपयेके नोट निकाले और अुसके हाथमें देकर वे अैसे भागे, जैसे कोअी बन्दूक लेकर अुनके पीछे आ रहा हो। यह दृश्य अुनके कोमल हृदयके लिये असह्य था। घर जाकर सारी रात रोते रहे। अुनको अिस बातका निश्चय हो गया कि कविकी स्त्री अिस मृत्युका हेतु मुझे समझ रही है। अतअेव अुसके सामने जाते हुअे डरते थे। सहानुभूतिका सच्चा भाव झूठे वहमको दूर न कर सका।

कअी दिन व्यतीत हो गये। अमरनाथके हृदयसे कविकी असमय और दुःखमय मृत्युका शोक मिटता गया। घायल हृदयोंके लिये समय बहुत गुणकारी मरहम है। प्रातःकाल था; प्रेस कर्मचारी 'दर्पण' का अंतिम प्रूफ लेकर आया। अुसमें कविकी कविता थी। अमरनाथके घाव हरे हो गये। कवि प्रायः कहा करता था कि कविकी संतान अुसकी कविता है। अमरनाथको यह कथन याद आ गया। कविकी कविता देखकर अुनको वही दुःख हुआ जो किसी प्यारे मित्रके अनाथ बच्चेको देखकर हो सकता है। अुन्होंने ठण्डी साँस भरकर प्रूफ देखना आरंभ किया। कवितासे नवीन रस टपकने लगा। सहसा अुनके हृदयमें अेक पाप-पूर्ण भावनाने सिर अुठाया। अुन्होंने कुछ समयतक विचार किया, और फिर काँपती हुअी लेखनीसे कविका नाम काटकर अुसके स्थानमें अपना नाम लिख दिया। मनुष्यका हृदय अेक अथाह सागर है, जहाँ कमलके फूलोंके साथ रक्तकी प्यासी जोंके भी अुत्पन्न होती रहती हैं।

५

'दर्पण' का पहला अंक निकला तो पढ़े-लिखे संसारमें धूम मच गयी। लोग देखते थे और फूले न समाते थे।

'दर्पण' भाव और भाषा दोनों प्रकारसे अत्युत्तम था, और विशेषतः 'चन्द्रलोक' के काव्य-मालाकी पहली कवितापर तो कवि-संसार लट्टू हो गया। अेक प्रसिद्ध मासिक-पत्रने ही अुसकी समालोचना करते हुअे लिखा—

"यों तो 'दर्पण' का अेक-अेक पृष्ठ रत्न-भाण्डारसे कम नहीं, परन्तु 'चन्द्रलोक' की पहली कविता देखकर तो हृदय नाचने लगता है। अिसकी अेक-अेक पंक्ति में 'अधीर' महाशयने जादू भर दिया है, और रसिकताकी नदी बहा दी है। सुना करते थे कि कविता हृदयके गहन भावोंका विशद चित्र है। यह कविता देखकर अिस कथनका समर्थन हो गया। निस्सन्देह, 'अधीर' महाशयकी ये कविताअें हिन्दी भाषाको फ्रांसीसी और अँग्रेजीके समान अुच्च कोटिपर ले जायँगी। 'अधीर' महाशय साहित्यके आकाशपर सूर्यकी नाअीं अेकाअेक चमके हैं और अेक ही कवितासे कवियोंकी पंक्तिमें शिरोमणि हो गये हैं।"

अेक दूसरे समाचार-पत्रने लिखा—

"'अधीर' महाशयकी कविता क्या है, अेक जादू-भरा सौन्दर्य है। हिन्दी भाषाका सौभाग्य समझना चाहिये कि अिसमें अैसे सूक्ष्म भावोंके वर्णन करनेवाले अुत्पन्न हो गये हैं, जिनपर भावी संतति अुचित रूपसे अभिमान करेगी। हमें दृढ़ विश्वास है कि यदि यह कविता अिसी सुन्दरतासे पूरी हो गयी तो अिसे हिन्दीमें वही दर्जा प्राप्त हो जायगा जो संस्कृतमें 'शकुन्तला' को, अँग्रेजीमें 'पैराडाअिज लॉस्ट'-को और बंग-भाषामें 'गीतांजलि' को प्राप्त है। 'अधीर' का नाम अिस कवितासे अटल हो जायगा।"

और अितना ही नहीं, अिस कविताका अनुवाद बँगला, मराठी, गुजराती, अँग्रेजी और फ्रांसीसी पत्रोंमें प्रकाशित हुआ,

और प्रशंसाके साथ। अमरनाथ जिस पत्रको देखते अुसमें अपना अुल्लेख पाते। अिससे अुनकी आत्मा गद्गद हो जाती, परन्तु कभी हृदयमें अेक धीमी-सी आवाज़ सुनाअी दे जाती थी, "तू डाकू है।" अमरनाथ अिस अन्तःकरणकी आवाज़को सुनते तो चौंक अुठते, परन्तु फिर दृढ़ संकल्पके साथ अुसको अन्दर-ही-अन्दर दबा देते।

अिसी प्रकार अेक वर्ष बीत गया। लाला अमरनाथका नाम भारतसे निकलकर यूरोप तक पहुँच गया। अँग्रेजी पत्रोंमें अुनकी कलापर लेख प्रकाशित हुअे। मासिक-पत्रोंने अुनके फ़ोटो दिये। कविता पूरी हुअी तो प्रकाशक अुसपर अिस प्रकार टूटे जैसे पतंग दीपकपर टूटते हैं। अँग्रेजी पब्लिशरोंने अनुवादके लिये बड़ी बड़ी रकमें भेंट कीं। अमरनाथके पैर भूमिपर न लगते थे। परन्तु जब कभी अपनी करतूत याद आती तब प्राण सूख जाते थे, जिस प्रकार विवाहकी रंगरेलियोंमें मृत्युका विचार आनन्दको किरकिरा कर देता है। परन्तु अुन्होंने अपने मृतक मित्रको सर्वथा भुला दिया हो, यह बात न थी। वे अुसकी स्त्रीके नाम हर महीने पचास रुपयेका मनीआर्डर करा दिया करते थे। वे अपना कर्तव्य समझते थे।

६

रात्रिका समय था। कविके मकानमें शोक छाया हुआ था। वह मौतसे तो बच गया था, परन्तु पांच मीलकी दूरीपर अपने गाँव चला आया था और मृतकके समान वर्ष-भरसे खाटपर पड़ा था। अिस रोगने अुसके शरीरका रक्त चूस लिया था। अब वह केवल हड्डियोंका पिंजर रह गया था। दिन रात चारपाअीपर लेटा रहनेके कारण अुसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो गया था। अिसपर अमरनाथका अेक बार भी न आना अुसकी क्रोधाग्निपर तेलका काम कर

गया। आठों पहर दुखी रहता था और अमरनाथको गालियाँ देता रहता था। सुशीला समझाती, “नहीं आते तो क्या हुआ, कुछ तुम्हारे शत्रु तो नहीं हो गये। पचास रुपया मासिक भेज रहे हैं, नहीं तो दवाके लिये भी तरसते फिरते। क्या जाने, किसी आवश्यक कार्यमें लगे हों। कवि यह सुनता तो तिलमिला अुठता और कहता—“रुपया वापस दिया जा सकता है, परन्तु सहानुभूतिके दो वचन वह ऋण है जिसे चुकाना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है।” यदि अुसके वशमें होता तो वह रुपये वापस कर देता। अुपेक्षा-भाव मनुष्यके लिये अेक निकृष्टतर व्यवहार है। वह गालियाँ सह सकता है, मार खा सकता है; परन्तु अुपेक्षा नहीं सह सकता। कवि अिसी प्रकृतिका मनुष्य था।

रात्रिका समय था। कविके मकानमें अेक मिट्टीका दीपक जल रहा था, जैसे निराशाकी अवस्थामें आशाकी किरण टिमटिमा रही हो। चारपाओीपर लेटा हुआ था और सोच रहा था, परमेश्वर जाने, ‘चन्द्रलोक’का क्या बना। अुसे यह भी ज्ञान न था कि ‘दर्पण’ निकला भा है या नहीं। अिस कवितासे क्या क्या आशाअें थीं! रोगने सब मिट्टीमें मिला दीं। अितनेमें दरवाज़ा खुला। कविका अेक मित्र रत्नलाल अन्दर आया। अुसके हाथमें अेक सजिल्द पुस्तक थी। कविने पूछा—“यह क्या है?”

“‘दर्पण’का फ़ाअिल।”

कविका कलेजा धड़कने लगा, अुसने विस्मित होकर पूछा—

“यह क्या? ‘दर्पण’ का फाअिल?”

“हाँ! देखोगे?”

“अवश्य! ज़रा दीपक अिधर ले आओ।”

बच्चे भूखसे बिलबिला रहे थे। सुशीला अुनके लिये रोटी पका रही थी। आटेका पेड़ा बनाते-बनाते बोली—“अब क्या पुस्तक पढ़ोगे? हकीमने मना किया है, कहीं फिर बुखार न हो जाय।”

“परन्तु कविने सुना अनसुना कर दिया, और ‘दर्पण’ का फाअिल देखने लगा। अपनी पहली कविता देखकर अुसका चेहरा खिल गया, जैसे फूलकी कली। अेक-अेक पद पढ़ता था और सिर धुनता था। सोचता, क्या यह मेरे मस्तिष्ककी रचना है? कैसा निरालापन है, कैसे अूँचे विचार! अेक अेक विचारमें आकाशके तारे तोड़कर रख दिये गये हैं। अुसको अपने भूतकालपर अीर्ष्या होने लगी। क्या अब भी बुद्धिको यह कला प्राप्त है? हृदय शोकमें डूब गया।

अेकाअेक कविताकी समाप्तिपर दृष्टि गयी। अमरनाथ ‘अधीर’ का नाम पढ़कर कविके कलेजेमें जैसे किसीने गोली मार दी। अुसको अुनसे अैसी आशा न थी। अुसको यह विचार भी न हो सकता था कि अमरनाथ अितने पतित हो सकते हैं। अपने परिश्रमपर यह डाका देखकर कविका रक्त अुबलने लगा और आँखोंसे अग्निके चिनगारे निकलने लगे। वह क्रोधसे तकियेका सहारा लेकर बैठ गया, और अपने मित्रसे बोला—“कागज़ और क़लम-दावात लाओ। मैं अेक गीत लिखूँगा।”

अिससे पहले वह कअी बार गीत लिखनेको तैयार हुआ, परन्तु दुर्बलताने अुसके अिस विचारको पूरा न होने दिया। रत्नलालने अुत्तर दिया—“रहने दो, तुम्हारा मस्तिष्क काम कर सकेगा?”

कविने अपने हाथकी मुट्ठियाँ कस लीं और भूखे शेरकी नाअीं गरजकर कहा—"तुम कलम-दावात लाओ। मैं लिख सकूँगा।"

रत्नलालने मशीनके समान आज्ञा-पालन किया। कवि बोला—"शीर्षक लिखो, 'लुटी हुअी कीर्ति'।"

रत्नलालने लिखकर कहा—"लिखाअिये।"

कविने लिखवाना आरंभ किया। कविताका स्रोत खुल गया! जिस प्रकार वर्षाके दिनोंमें नदी-नालोंमें बाढ़ आ जाती है, अुसी प्रकार अिस समय कविताका प्रवाह वेगसे बह रहा था। विचार आप-से आप ग्रथित हो रहे थे। अुसे सोचनेकी आवश्यकता न थी। परन्तु कविता साँचेमें ढली हुअी थी, मानो जिह्वापर सरस्वती आकर बैठ गअी थी। क्या सुलझे हुअे विचार थे, कैसे प्रभावशाली भाव! पद पदसे अग्निके चिनगारे निकल रहे थे। जिस प्रकार नववधूका सुहाग अुजड़ जानेपर अुसका हृदय-वेधी चीत्कार करुणा-भरे हृदयोंमें हल-चल मचा देता है, अुसी प्रकार अिस कविताको देखकर मस्तिष्क खौलने लगता था, और हृदयमें विचार विश्वास बनकर बैठ जाता था कि कोअी अत्याचार-पीड़ित अत्याचारीके विरुद्ध पुकार कर रहा है।

अेकाअेक दरवाज़ा खुला और अमरनाथ अन्दर आये। अिस समय अुनका मुख-मण्डल अस्त होते हुअे सूर्यके समान लाल था। कविने अुनको देखा तो चौंक पड़े, जैसे पाश-बद्ध पक्षी व्याधको देखकर चौंक अुठता है। कविने घृणासे मुँह फेर लिया, पर अमरनाथने अुसकी परवाह न की और वे रोते रोते कविके पैरोंसे लिपट गये, जैसे दोषी बालक पिताकी गोदमें मुँह छिपाकर रोता है।

रत्नलाल और सुशीला दोनों आश्चर्यमें थे। कविने रुखाअीसे कहा—"यह क्या करते हो?"

अमरनाथने अुत्तर दिया—"मैंने तुम्हारा अपराध किया है, जबतक क्षमा न करोगे, पैर न छोडूँगा। मुझे आज ही मालूम हुआ कि तुम जीवित हो, नहीं तो यह पाप न होता।

कविने कुछ देर सोचा और कहा—"तुम्हें लज्जा तो न आयी होगी?"

"यह कुछ न पूछो, अब क्षमा कर दो।"

"प्रकृतिके कान क्षमाके नामसे अपरिचित हैं। प्रायश्चित्त करो।"

"वह मैं कर दूँगा।"

"परन्तु कैसे?"

अमरनाथने जेबसे अेक कागज़ निकाला और कविके हाथमें रख दिया। कविने अुसे पढ़ा और स्तंभित रह गया—

"क्या तुम यह नोट प्रकाशित कर दोगे?"

"अिसके सिवा और अुपाय ही क्या है?"

"अितना यश छोड़ दोगे?"

"छोड़ दूँगा।"

"तुम्हारी निन्दा होगी। लोग क्या कहेंगे?"

अमरनाथने आग्रहके साथ कहा—"चाहे कुछ भी कहें। मैं अपने दोषको स्वीकार करूँगा। अिससे मेरा अन्तःकरण शान्त हो जायगा, कवि! संसार मुझसे अीर्ष्या करता है; परन्तु मुझे रातको नींद नहीं आती। मैंने तुम्हारे परिश्रमका

लाभ अुठाया है, तुम्हारी रचनाओंने मेरा नाम योरुपतक पहुँचा दिया है। परन्तु तुम यह कीर्ति, यह नाम, अेक दिनमें मुझसे वापस ले सकते हो। मैं अुस कौअेके समान हूँ जिसने मोरके पंख लगाकर सुन्दर प्रसिद्ध होना चाहा था। तुम्हारी कविताओंका भाण्डार समाप्त हो चुका है, अब मैं शुष्क स्रोत हूँ। संसार मुझसे नये विचार, नये भाव माँगेगा। मैं अुसे क्या दे सकता हूँ?—नहीं नहीं, मैं अपना पाप स्वीकार कर लूँगा, और तुम्हारी कीर्ति तुम्हें अर्पण करूँगा। बोलो, मुझे क्षमा कर दोगे?"

कविका हृदय भर आया। अुसके नेत्रोंमें आँसू लहराने लगे। अुन आँसुओंमें हृदयकी घृणा बह गयी। अुसने सच्चे हृदयसे अुत्तर दिया—"यह न करो, मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ।"

अमरनाथ तनकर खड़े हो गये और बोले —"प्रायश्चित्त किये बिना मुझे शान्ति न मिलेगी।"

यह कहकर जेबसे अुन्होंने नोटोंका अेक बंडल निकाला और कविको देकर कहा—"यह तुम्हारी दौलत है।"

कविने गिना, तीन हजारके नोट थे, पूछा—"ये कैसे हैं?"

"अँग्रेजी अेडीशनकी 'रॉयल्टी' है। अिसे स्थायी आय समझो। मैंने पब्लिशरको सूचना दे दी है कि भविष्यमें 'रॉयल्टी' तुम्हें सीधी भेजी जाय।"

कविकी आँखोंमें आँसू भर आये। वह अमरनाथके गलेसे लिपटकर रोने लगा।

७

दिन चढ़ा तो कविकी अवस्था बहुत-कुछ बदल चुकी थी। अितनेमें अमरनाथका अेक नौकर आया। अुसके मुखका रंग अुड़ा था। आते ही बोला—"लालाजी चल बसे।"

कविका कलेजा मुँहको ? आ गया। अुसने जख्मी पक्षीकी नाअीं तड़पकर कहा—" क्या कहा तुमने ? "

" लालाजी चल बसे। रातको कुछ खा लिया। "

कविके हृदयमें क्या क्या अुमंगें भरी हुअी थीं, सबपर पानी फिर गया। अमरनाथकी भलाअियाँ सामने आ गयीं। कैसा देवता मनुष्य था ! पापका प्रायश्चित्त किस शानसे कर गया ! हाथ आया हुआ धन किस सुगमतासे अर्पण कर गया। और अितना ही नहीं, मेरी कीर्ति मुझे वापस दे गया। अपने पापको अपने हाथ स्वीकार गया। कविका हृदय रोने लगा।

सहसा विचार आया, अब ' चन्द्रलोक 'के लेखक होनेका दावा करना ओछापन है। वह मेरे साथ अितनी भलाअी करता था, क्या उसके शवका अपमान करूँगा ? कविने उदारताका प्रमाण देनेका निश्चय कर लिया, और टाँगेमें बैठकर वर्ष-भरके रोगके पश्चात् पहली बार शहरके श्मशानमें पहुँचा। वहाँ नगर-भरके बड़े-बड़े विद्वान मौजूद थे। कविने ' अधीरकी कविता 'पर अेक ओजस्विनी वक्तृता दी और अुसकी प्रशंसामें कोषके सुन्दर और रसीले शब्द समाप्त कर दिये।

दूसरे मासका 'दर्पण' कविकी 'अेडीटरी'में प्रकाशित हुआ। अुसमें स्वर्गवासी 'अधीर' के नामसे अेक हृदय-वेधक कविता प्रकाशित हुअी, जिसका शीर्षक ' लुटी हुअी कीर्ति ' था, और कविकी ओरसे अेक छोटा-सा नोट निकला—

" अधीर ' मर गये, परन्तु अुनकी कविता अमर है। पाठक यह पढ़कर प्रसन्न होंगे कि 'अधीर' अपने पीछे कविताओंका अेक बहुत बड़ा अप्रकाशित भाण्डार छोड़ गये हैं और ये कविताअें ' दर्पण ' में क्रमशः निकलती रहेंगी। "

अिसके पश्चात-कविने जो कविता लिखी वह 'अधीर' के नामसे प्रकाशित हुअी। कैसा अुच्च बलिदान है, कैसा निःस्वार्थ त्याग! संसारमें रुपया-पैसा त्यागनेवालोंकी कमी नहीं। परन्तु अिन सबके सामने अेक लालसा होती है—अेक कामना कि हम मर जायँ, परन्तु हमारा नाम प्रसिद्ध हो जाय, जो अजर-अमर हो। परन्तु अिस नामका त्याग करनेवाले कितने हैं?

कविने मित्रके लिये अपने नामको निछावर किया।

ज्ञान

ज्ञानको अेक रात सोते समय भगवानने स्वप्नमें दर्शन दिये और कहा—"ज्ञान, मैंने तुम्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर संसारमें भेजा है। अुठो, संसारका पुनर्निर्माण करो।"

ज्ञान जाग पड़ा। अुसने देखा, संसार अन्धकारमें पड़ा है और मानव-जाति अुस अन्धकारमें पथ-भ्रष्ट होकर विनाशकी ओर बढ़ती चली जा रही है। वह अीश्वरका प्रतिनिधि है, तो अुसे मानव-जातिको पथपर लाना होगा, अन्धकारसे बाहर खींचना होगा, अुसका नेता बनकर अुसके शत्रुसे युद्ध करना होगा।

और वह जाकर चौराहेपर खड़ा हो गया और सबको सुनाकर कहने लगा—"मैं मसीह हूँ, पैगम्बर हूँ, भगवानका प्रतिनिधि हूँ। मेरे पास तुम्हारे अुद्धारके लिये एक संदेश है"

लेकिन किसीने अुसकी बात नहीं सुनी। कुछ अुसकी ओर देखकर हँस पड़ते; कुछ कहते--'पागल है'; अधिकांश

कहते—'यह हमारे धर्मके विरुद्ध शिक्षा देता है, नास्तिक है, अिसे मारो !' और बच्चे अुसे पत्थर मारा करते।

*　*　*

आखिर तंग आकर वह अेक अँधेरी गलीमें छिपकर बैठ गया और सोचने लगा। अुसने निश्चय किया कि मानव-जातिका सबसे बड़ा शत्रु है धर्म, अुसीसे लड़ना होगा।

तभी पास कहींसे अुसने स्त्रीके करुण क्रन्दनकी आवाज़ सुनी। अुसने देखा, अेक स्त्री भूमिपर लेटी है, अुसके पास अेक बहुत छोटा-सा बच्चा पड़ा है, जो या तो बेहोश है या मर चुका है, क्योंकि अुसके शरीरमें किसी प्रकारकी गति नहीं है।

ज्ञानने पूछा—"बहन, क्यों रोती हो?"

अुस स्त्रीने कहा—"मैंने अेक विधर्मीसे विवाह किया था। जब लोगोंको अिसका पता चला, तब अुन्होंने अुसे मार डाला और मुझे निकाल दिया। मेरा बच्चा भी भूखसे मर रहा है।"

ज्ञानका निश्चय और दृढ़ हो गया। अुसने कहा—"तुम मेरे साथ आओ, मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा।" और अुसे अपने साथ ले गया।

ज्ञानने धर्मके विरुद्ध प्रचार करना शुरू किया। अुसने कहा—"धर्म झूठा बन्धन है। परमात्मा अेक है, अबाध है और धर्मसे परे है। धर्म हमें सीमामें रखता है, रोकता है, परमात्मासे अलग रखता है, अतः हमारा शत्रु है।"

लेकिन किसीने कहा—"जो व्यक्ति परायी और बहिष्कृता औरतको अपने साथ रखता है, अुसकी बात क्यों सुनें! वह समाजसे पतित है, नीच है।"

तब लोगोंने अुसे समाजच्युत करके बाहर निकाल दिया।

*　*　*

ज्ञानने देखा कि धर्मसे लड़नेके पहले समाजसे लड़ना है। जबतक समाजपर विजय नहीं मिलती, तबतक धर्मका खंडन नहीं हो सकता।

तब वह अिसी प्रकार प्रचार करने लगा—वह कहने लगा—"ये धर्मध्वजी, ये पुंगी-पुरोहित, मुल्ला, ये कौन हैं? अिन्हें क्या अधिकार है, हमारे जीवनको बाँध रखनेका? आओ, हम अिन्हें दूर कर दें, अेक स्वतंत्र समाजकी रचना करें, ताकि हम अुन्नतिके पथपर बढ़ सकें।"

तब अेक दिन विदेशी सरकारके दो सिपाही आकर अुसे पकड़ ले गये, क्योंकि वह वर्गोंमें परस्पर विरोध जगा रहा था।

ज्ञान जब जेल काटकर बाहर निकला, तब अुसकी छातीमें अिन विदेशियोंके प्रति विद्रोह धधक रहा था। यही तो हमारी क्षुद्रताओंको स्थायी बनाये रखते हैं, और अुससे लाभ अुठाते हैं। पहले अपनेको विदेशी प्रभुत्वसे मुक्त करना होगा, तब........और वह गुप्त रूपसे विदेशियोंके विरुद्ध लड़ाअीका आयोजन करने लगा।

अेक दिन अुसके पास अेक विदेशी आदमी आया। वह मैले-कुचैले, फटे-पुराने खाकी कपड़े पहने हुअे था। मुखपर झुर्रियाँ पड़ी थीं, आँखोंमें अेक तीखा दर्द था। अुसने ज्ञानसे कहा—"आप मुझे कुछ काम दें, ताकि मैं अपनी रोज़ी कमा सकूँ। मैं विदेशी हूँ। आपके देशमें भूखा मर रहा हूँ। क़ोअी भी काम मुझे दें, मैं करूँगा, आप परीक्षा लें। मेरे पास रोटीका टुकड़ा भी नहीं है।"

ज्ञानने खिन्न होकर कहा—"मेरी दशा तुमसे कुछ अच्छी नहीं है, मैं भी भूखा हूँ।"

वह विदेशी अेकाअेक पिघल-सा गया। बोला—"मैं आपके दुःखसे बहुत दुखी हूँ। मुझे अपना भाअी समझें। यदि आपसमें सहानुभूति हो, तो भूखे मरना मामूली बात है। परमात्मा आपको रक्षा करें। मैं आपके लिये कुछ कर सकता हूँ?"

❀ ❀ ❀

ज्ञानने देखा कि देशी-विदेशीका प्रश्न तब अुठता है जब पेट भरा हो। सबसे पहला शत्रु तो यह भूख ही है। पहले भूखको जीतना होगा, तभी आगे कुछ सोचा जा सकेगा.........

और अुसने 'भूखके लड़ाकों'का अेक दल बनाना शुरू किया, जिसका अुद्देश्य था अमीरोंसे धन छीनकर सबमें समान रूपसे वितरण करना, भूखोंको रोटी देना अित्यादि; लेकिन जब धनिकोंको अिस बातका पता चला तब अुन्होंने अेक दिन चुपचाप अपने चरों द्वारा अुसे पकड़वा मँगाया और अेक पहाड़ी क़िलेमें क़ैद कर दिया। वहाँ अेकान्तमें वे अुसे सतानेके लिये नित्य अेक मुट्ठी चबेना और अेक लोटा पानी दे देते, बस।

धीरे-धीरे ज्ञानका हृदय ग्लानिसे भरने लगा। जीवन अुसे बोझ-सा जान पड़ने लगा। निरन्तर यह भाव अुसके भीतर जगा करता कि मैं, ज्ञान, परमात्माका प्रतिनिधि अितना विवश हूँ कि पेट-भर रोटीका प्रबन्ध मेरे लिये असम्भव है। यदि अैसा है, तो कितना व्यर्थ है यह जीवन कितना छूछा, कितना बेअीमान!

अेक दिन वह क़िलेकी दीवारपर चढ़ गया। बाहर खाअीमें भरा हुआ पानी देखते—देखते अुसे अेकदमसे विचार

आया और अुसने निश्चय कर लिया कि वह अुसमें कूदकर प्राण खो देगा। परमात्माके पास लौटकर प्रार्थना करेगा कि मुझे अिस भारसे मुक्त करो; मैं तुम्हारा प्रतिनिधि तो हूँ, लेकिन अैसे संसारमें मेरा स्थान नहीं है।

वह स्थिर-मुग्ध दृष्टिसे खाअीके पानीमें देखने लगा। वह कूदनेको ही था कि अेकाअेक अुसने देखा, पानीमें अुसका प्रतिबिम्ब झलक रहा है और मानो कह रहा है-" बस, अपने आपसे लड़ चुके ? "

ज्ञान सहमकर रुक गया; फिर धीरे-धीरे दीवारपरसे नीचे अुतर आया और क़िलेमें चक्कर काटने लगा।

और अुसने जान लिया कि जीवनकी सबसे बड़ी कठिनाअी यही है कि हम निरन्तर आसानीकी ओर आकृष्ट होते हैं।

देवसेना

१

रामनाथय्यर और अुनकी पत्नी सीतालक्ष्मी 'चाअिना बाज़ार' गये और कुछ चीज़ें खरीदनेके बाद, पासके होटलमें जलपान कर, अपनी मोटरमें आ बैठे।

" समुद्रके किनारे चलें ? " रामनाथय्यरने पूछा।

" बीच (समुद्र किनारा) पर ? किसी अैसी जगहमें गाड़ी रोकनेको कहिये जहाँ लोगोंकी भीड़ न हो। भीड़-भड़क्केमें जाना मुझे पसन्द नहीं। वहाँ देखिये, खिलौने बिक रहे हैं। दो-चार खरीद लीजिये, बच्चोंके लिये ले जायँगे।"

सीतालक्ष्मीका अितना कहना था कि खिलौनेवाला गाड़ीके पास आ गया। वह किसी तरह सीतालक्ष्मीके मनकी बात ताड़ गया। पति–पत्नी गाड़ीमें बैठे–बैठे खिलौने चुन रहे थे और भाव पटा रहे थे। गाड़ीके दूसरे दरवाज़ेके पास अेक युवती भिखारिन अेक नन्हे बच्चेको गोदमें ले सबको दिखाकर कह रही थी—" महाराज, धरम कीजिये। नन्हा बालक है, माँ!"

रामनाथय्यरने पूछा—" सभी जापानी खिलौने हैं न?"

व्यापारीने कहा—" जापानी ही हैं, और क्या? हमारे यहाँ अैसे खिलौने बनते कहाँ हैं?"

भिखारिनने फिर गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की।

सीतालक्ष्मीने कहा–"सौदा करते वक्त यह क्या बला है! अिस शहरमें भिखारियोंका अुपद्रव बहुत ज्यादा हो गया है।"

" भूख लगती है, भाअी; आँख अुठाकर देखो, माँ! भगवान तुम्हारा भला करे!" भिखारिनने कहा।

सीतालक्ष्मीने डाँटा—" जाओगी कि पुलिसको पुकारूँ?"

" दूधके बिना बच्चा तड़प रहा है, माँ! अेक आना भीख दो, भाअी! कितने ही तो खर्च हो रहे हैं, महारानी!"

रामनाथय्यर भाव ठहराकर मोल ली हुअी चीज़ोंको रखते हुअे बोले—" चलो, बीच चलें।"

ड्राअिवरने भिखारिनको हट जानेका संकेत किया और गाड़ी चली।

" महाराज, महाराज!" कहती हुअी भिखारिन कुछ दूरतक गाड़ीको पकड़े हुअे दौड़ी आ रही थी।

"दौड़ो मत—मर जाओगी।" रामनाथय्यरने कहा। भिखारिनका मुँह अुनको कहीं देखा हुआ-सा जान पड़ा। गाड़ी तेज़ीसे चलने लगी, तो उन्होंने कहा—"लड़की बेचारी छोटी है। शकल देखनेसे तो अपने गाँवकी मालूम होती है।"

"किसी भी गाँवकी हो; होगी कोअी चुड़ैल! अुससे हमें क्या करना है? दीजिये, देखूँ तो वह नया खिलौना क्या है, 'अेरोप्लेन'? चाबी देनेका है या मामूली खिलौना है?"

खिलौनोंको अेक अेक करके देखते हुअे वे समुद्र-तीर पहुँचे।

२

सेलममें पेरियण्णमुदलि गलीमें गरीब जुलाहोंका अेक कुटुम्ब था। वैयापुरिकी अुम्र तीसकी थी। अुसकी बहन देवसेना बीसकी थी; अुसका ब्याह नहीं हुआ था। अुनकी माँका नाम था पळनियम्माळ। तीनों अपने पुराने परम्परागत जुलाहेके धन्धेसे कष्टमय जीवन व्यतीत करते थे। दिन-भरकी मेहनत करके तीनों मिलकर अेक हफ्तेमें चार रुपये कमाते थे।

कअी सालसे करघेका व्यवसाय ठंडा होता गया। मज़दूरी घटने लगी। बादमें कम मज़दूरीके भी न मिलनेसे लोगोंकी हालत खराब थी। सेलममें कअी मेखोंके साथ वैयापुरिकी मेख भी बेकार पड़ी थी। देवसेना दो ब्राम्हण अफ़सरोंके यहाँ घरकी सफाअी और काम-काज कर देती थी, जिससे अुसको मासिक तीन रुपये मिल जाते थे। पळनियम्माळ भी एक घरमें लीप पोतकर अेक रुपया कायदा ही लेती थी। वैयापुरि करघोंके मालिकोंके पास नौकरीके भटकता फिरा। जब कहीं नौकरी नहीं मिली, तो व[...] हर-अेक घरमें माँसे विदाअी लेकर बंगलोर चला गया। किसी मि[...] पानेकी अुम्मीदसे कअी मुदलि लोग भी अुसके [...]

वैयापुरिका पत्र आया कि कअी दिनकी कोशिशसे मिलमें नौकरी लग गयी है। वैयापुरि कुछ लिखना-पढ़ना जानता था। बचपनमें अुसके पिताने अुसे मुहल्लेके म्युनिसिपल स्कूलमें शामिल कराया था। अुन दिनों जुलाहोंका जीवन अितना कष्ट-मय नहीं था।

पड़ोसी मारियप्प मुदलिके लड़केने वैयापुरिके पत्रको पढ़ सुनाया— "गली-गली छाननेपर, कितनोंकी मुट्ठी गरमकर, अेक मिलमें नौकरी मिली है। रोज़ आठ आने मज़दूरी मिलती है। महीनेमें छब्बीस दिन काम करना पड़ता है, अिसलिये तेरह रुपये मिलेंगे। अिस महीनेकी तनख्वाह खाने-पीनेमें और क़र्ज़ चुकानेमें लग जायगी। अगले महीनेसे तुम लोगोंको दो रुपये महीने भेज सकूँगा, आगे अीश्वर है।"

बुढ़िया और देवसेनाके आनन्दकी सीमा न रही।

दस दिन बाद, अेक और खत मिला—"माताको साष्टांग नमस्कार। यहाँ अीश्वरकी कृपासे सब कुशल है। आशा है, देवसेना और तुम कुशल-पूर्वक होगी। यहाँ मिलका काम मुझे अच्छा नहीं लगता। अुन दिनोंकी याद करके, जब मैं अपने करघेपर बैठा काम करता था, मैं आँसू पीकर रह जाता हूँ। यहाँ मैं पागल-सा हो रहा हूँ। सिरमें ...्कर आता है। मैं अपने दुःखों और झंझटोंका वर्णन नहीं ...र सकता। न-जाने क्यों मैं गाँव छोड़कर अिधर चला आया। ... घरवाले लड़केके द्वारा, अगर हो सके तो, चिट्ठी ...रा पता है—सेलम वैयापुरि मुदलि, मल्लेश्वरम्

३

देवसेना जिन दो घरोंमें काम-काज करती थी, अुनमेंसे अेक, अेक पेन्शनरका घर था। अुनकी स्त्री अच्छे स्वभावकी थी। वह काम लेनेमें सख्त थी; पर अन्य बातोंमें प्रेमका बर्ताव रखती थी। अुसने देवसेनाको अपनी अेक पुरानी साड़ी दी। रसोअीमें बची हुअी चीज़ें भी—भात और कढ़ी, पापड़ और खीर—अुसे ही मिलतीं। अिस तरह कितने दिन बीत गये।

शायद भगवानको देवसेनाका शान्तिमय जीवन मंजूर न था। अुस घरका रसोअिया—देवसेनाको बचे हुअे भोजनादि देनेवाला—अुसके साथ रसीली बातें करता। अेक दिन अुसने अुसकी अिच्छाके विरुद्ध अुसके साथ छेड़-छाड़ की।

देवसेनाकी आँखोंमें खून अुतर आया; लेकिन मारे लज्जाके अुसने यह बात किसीसे नहीं कही। अुस धूर्तने लालच दिया था—'किसीसे कहना मत; तुझे मासिक दो रुपये दूँगा।'

देवसेना आँसू पीकर रह गयी। अुसने घर जाकर अपनी माँसे कहा—"मैं अुस नीमके पेड़वाले घरमें काम नहीं करूँगी, माँ!"

जब माँने अुसका कारण पूछा, तब देवसेनाने बड़े दुःखके साथ सारी हक़ीकत कह सुनायी। बुढ़ियाने कहा—"मैं सारी बातें घरकी मालकिनसे कहूँगी।"

देवसेना बोली—"नहीं माँ, अुनसे कहनेसे फायदा ही क्या है? मैं फिर वहाँ कामपर नहीं जाअूँगी।"

और जगह नौकरीकी तलाश की गयी; पर हर-अेक घरमें

कोअी-न-कोअी नौकरानी कामपर थी ही। दो महीने अिधर-अुधर भटकनेपर अेक घरमें नौकरी मिल गयी।

* * *

छः महीने गुज़र गये। बंगलोरके अुस मिलमें, जहाँ वैयापुरि काम करता था, हड़ताल मनायी गयी। साहबने किसी मिस्त्रीपर हाथ चला दिया था। अुसके बाद वह मिस्त्री और कुछ कुली कामसे निकाले गये। अिस कारण मज़दूर-यूनियनकी बैठक हुअी, जिसमें यह प्रस्ताव पास हो गया कि अुस महीनेके वेतनके मिलते ही हड़ताल शुरू की जाय। वैयापुरिको भी अिसमें शामिल होना पड़ा।

अेक महीनेतक हड़ताल चालू रही। मज़दूरोंकी सभाअें हुअीं और बड़ी हलचल मची। आरम्भमें अुद्‌वेग कुछ अधिक था; पर ज्यों-ज्यों पैसेकी कमी होती गयी त्यों-त्यों अुनका जोश भी ठंडा पड़ता गया। चंद सरकारी अफ़सरोंने अन्तमें सुलह कराअी। सब लोग फिर मिलमें काम करने लगे। अेक हफ्तेके बाद 'गेट' पर नोटिस लगाअी गयी कि 'पचीस कामगार कामसे हटा दिये गये हैं, और वे मिलमें प्रवेश न करें।' वैयापुरि भी अिन पचीसोंमेंसे अेक था।

वैयापुरिने अपने मिस्त्रीसे कहा—"अरे, मैंने क्या पाप किया था? मैं तो नया आया था और किसीमें शामिल भी नहीं हुआ।"

मिस्त्रीने जवाब दिया- 'बड़े साहबका हुक्म है। यह सब अुस हत्यारे 'टाअिम-कीपर' रंगस्वामी नायकमकी करतूत है। और नामोंके साथ तुम्हारे नामको भी सूचीमें मिलाकर अुसने साहबके पास दे दिया है। अिसमें मैं कुछ नहीं कर सकता।"

रंगस्वामी नायकमके पास बड़ी नम्रताके साथ अपील की गयी। अुसने कहा—"मैं कुछ नहीं जानता। यह सब वेतन-बँटवारा करनेवाले गुमाश्ता अय्यरका काम है।"

हर किसीके पास बार-बार जाकर अनुनय-विनय करनेपर भी कुछ नहीं हुआ। मैनेजरने कहा—"तुम लिखना-पढ़ना जानते हो, और लोगोंको तुमने भड़काया है; अिसलिये हम तुमको कामपर नहीं ले सकते।"

कअी दिन घूम-घामकर, हाथके सब दाम खतम कर, बहुत तकलीफ़के साथ वैयापुरि मद्रास आ पहुँचा। अुसके साथ ही और दस कामगार, जो अुस मिलसे निकाले गये थे, नौकरीकी खोजमें मद्रास आये। अुन्होंने अपने सब पैसोंको आपसमें बाँटकर भोजनका खर्च निकाला और आठ दिन तक अिधर-अुधर भटकते फिरे।

वैयापुरिको अेक मिलमें नौकरी मिली। 'गेट-कीपर' और छोटे-मोटे अफसरोंको चाँदीके जूते मारनेमें पाँच रुपये लग गये। वैयापुरिने अपने सोनेके कुण्डल बन्धक रखकर थोड़े रुपये क़र्ज़ लिये और अुसीसे भोजन-खर्च, मित्रोंका क़र्ज़ वगैरह चुका दिये। कुछ दिनोंके बाद वैयापुरि अपना कष्ट भूलनेके लिये शराब पीने लगा। सेलममें अुसकी यह आदत नहीं थी। फिर कुछ यारोंने अुसे जुअेका भी रास्ता दिखा दिया और अुसे मालामाल हो जानेकी तरकीब बतायी। अुसकी मजदूरीमेंसे भोजन-व्यय, झोपड़ीका किराया आदि जरूरी खर्चके बाद जो रक़म बचाती, वह गाँवको भेजे जानेके बदले अिन्हीं मदोंमें खर्च की जाने लगी। पठानका ऋण भी बढ़ता ही गया। अिन तकलीफ़ोंसे तंग आकर वह और भी ज़्यादा पीने लगा।

पहले तो वह अिधर-अुधरकी बातें करके अपने कुटुम्बियों-को टाल देता था। अब अुसने लिखा—खर्चके लिये मैं कुछ नहीं भेज सकता। अगर चाहे तो देवसेना यहाँ आकर किसी मिलमें काम कर सकती है।

यह पत्र पढ़कर देवसेना और पळनियम्माळका जी धक्-से हो गया। कुछ रोज सब्र करनेपर अेक दिन देवसेनाने कहा—"क्यों माँ, मैं मद्रास ही क्यों न चली जाअूँ? वैयापुरिके साथ काम करके मैं भी दो-चार पैसे कमा लूँगी और तुमको भेजा करूँगी। सुना है, मद्रासमें मुझ-जैसी कितनी ही लड़कियाँ मिलमें काम करती हैं।"

पहले तो माताने बड़ी आना-कानी की और कहा—"यह भी कहीं हो सकता है? तुझ-जैसी अनजान लड़कियाँ अुतनी दूर कैसे जायँ? कुछ दिन वाद-विवाद करनेके बाद वृद्धा भी सहमत हुअी। देवसेनाने अपने कनफूल गिरो रखकर पड़ोसी माण्यिनके पाससे बारह रुपये क़र्ज़ लिये, और मद्रासके लिये रवाना हुअी।

४

मद्रासमें वैयापुरिने देवसेनाको अेक मिलमें सूत कातनेके विभागमें लगा दिया। वैयापुरिका मिल अलग था और यह अलग। अुस मिलमें देवसेना-जैसी करीब डेढ़ सौ लड़कियाँ, छोटी और बड़ी, काम करती थीं। देवसेना और अुसके साथकी दस लड़कियोंका संचालन करनेवाला अेक मेट था। वह पहले तो देवसेनासे बहुत प्यारके साथ पेश आता था। फिर काम करते वक्त डाँट-डपट करने लगा। जब कभी अेकान्तमें मिलता, तो बिना कारण ही अुसके साथ बड़ी रसीली बातें करता।

देवसेनाने अपनी अेक साथिनसे प्रश्न किया—" यह क्या बात है ? ये क्यों अिस तरहका बर्ताव करते हैं ? "

साथिनोंने मुसकराते हुअे कहा—" तुम तो जैसे कुछ जानती ही नहीं ! बेचारी, गँवार हो ! अगर अुनके कहे मुताबिक़ न चलो, तो वे तुमपर मज़दूरोंकी आधीसे भी ज्यादा रक़मका जुरमाना लगा दें । अगर वे खुश हो जायँ, तो जो भी सुभीता तुम चाहो, कर दें । "

ग़रीबोंकी तकलीफ़को पूछता कौन है ? तिसपर ग़रीब लड़कियोंका जन्म लेकर जो मिलोंमें काम करती हैं, अुन्हें तो पूर्वजन्मकी पापिन ही कहना चाहिये ।

देवसेनाने कुछ दिनोंतक सब बातोंको सहन किया । फिर अपने आपको अक्षम समझकर अुसने मिस्त्रीके व्यवहारका प्रतिवाद करना छोड़ दिया । दिल थामकर वह अुसके साथ हँसी-खुशीसे बोलने-चालने लगी । दिन-पर-दिन अुसमें वह आनन्दका अनुभव करने लगी । अुसकी मज़दूरी भी बढ़ गयी ।

कअी महीने बीत गये । देवसेनाको शरीरमें बाधाअें दिखायी दीं । अुसे मालूम हुआ कि अुसके पाँव भारी हो गये हैं । सारे देवताओंकी अुसने मनौतियाँ मान लीं । जंगलमें शिकारीसे बचनेके लिये भागनेवाली हिरनीकी भाँति वह चकित और किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गयी । वैयापुरिसे अपनी बात करनेमें अुसे डर लगा । अुसकी हालतको देख कुछ साथिनें अुसकी हँसी-दिल्लगी करने लगीं । अुसने गाँव जानेका विचार किया; लेकिन अुसे यह भय हुआ कि गाँववाले अुसे बिरादरीसे निकाल देंगे । अुसकी माँ अिस बातको कैसे सहन करेगी, यह सोचते ही अुसने गाँव जानेका अिरादा छोड़ दिया । भगवानपर भरोसा रखकर अुसी हालतमें वह मिलमें काम करती जाती थी ।

अेक दिन अचानक अुसका मन सिहर अुठा। वह खूब रोयी—"हाय, मैं क्या करूँ? मैंने अपने कुलको कलंकका टीका लगाया है!"

अुसकी साथिन बोली—"घबराओ मत देवसेना, यह तो अेक अैसी घटना है, जो सबपर बीतती है। अिसके लिये दवा है। तुरन्त आराम हो जायगा।"

"हाँ, मैंने भी सुना है; पर मुझे डर लग रहा है। कहीं मर तो न जाअूँगी? हाय रे भगवान! मुझे छिपनेके लिये कहीं ठौर बताओ।"

"दो रुपये दो तो "मुत्तुस्वामी आचारी गली"में अेक बाअी रहती है, वह सब कुछ कर देगी!"

"अगर पुलिसको खबर मिल गयी तो, वे पकड़ न लेंगे?" देवसेनाने पूछा।

"अरी, अुसके लिये डर मत। अुस बाअीका पुलिसवालोंके साथ मेल-जोल है। तुम तो जानती हो, रुपयोंसे कोअी भी काम बन सकता है।"

"हाय! मैं रुपयेके लिये कहाँ जाअूँ? हा भगवान! तुम तो, मालूम पड़ता है, मुझे भूल गये हो। मैं अिस गन्दी जगहमें आयी क्यों? अच्छा होता, मैं सेलममें ही भूख-प्याससे तड़पकर मर जाती!"

* * *

कुछ दिनोंके बाद किसी दूसरी साथिनने अेक अुपाय बता दिया—"शिशुकी हत्या नहीं करनी चाहिये, दैया! कहते हैं, वह तीन जन्मतक न मिटनेवाला पाप है। गणेश-मन्दिरकी

गलीमें अेक बुढ़िया रहती है; अच्छे स्वभावकी है। असके पास चली जाओ, तो सब काम वह कर लेगी। तुम्हारे-जैसी कितनी ही स्त्रियां अुसके घरमें जच्चा हुअी हैं। तुम मत घबराओ।"

देवसेनाने दुआ माँगी—"भगवान तुम्हारा भला करे, बहन!"

अनन्तर देवसेना गणेश-मन्दिरकी गलीमें रहनेवाली परोपकारिणी बाअीके पास गयी। यथासमय प्रसव हुआ। बच्चेको छूते ही देवसेनाकी दुनिया कुछ निराली ही हो गयी। वह सब कष्टोंको भूल गयी। बच्चा ही अब अुसका सारा संसार था।

वह बच्चेको दूध पिलाती हुअी कहती—"यह अीश्वरकी देन है। अिस बेचारेने क्या किया है? मैं ही कुल-कलंकिनी हूँ।" अिस तरह कुछ दिनोंतक वह अपनी चिन्ताओंको भूल-सी गयी।

गणेश-मन्दिरकी गलीवाली परोपकारिणी बाअी बड़े रहमके साथ कहती—"देवसेना, तुम अब कामपर नहीं जा सकती हो। और कुछ दिन यहाँ ठहर जाओ।"

'दुनियामें अैसे अच्छे लोगोंके रहते मैंने भगवानकी निन्दा की,' यह सोचकर देवसेनाने परमेश्वरकी वन्दना की।

अेक महीनेके बाद भेद खुला। वह बुढ़िया मानव-वंचित ललनाओंको अपने पास रखकर अुनसे जीविका चलानेवाली थी। देवसेना अुसके जालमें फँस गयी। वह फिर कभी मिलमें काम करने नहीं गयी।

५

"सेलममें अपने घरमें काम करनेवाली देवसेनाको तुम नहीं जानती हो! बस, अुसीके-जैसी थी वह भिखारिन।" रामनाथय्यरने कहा।

रामनाथय्यर अुन्हीं पेन्शनरके ज्येष्ठ पुत्र थे, जिनके घरमें देवसेना पहले-पहल काममें लगी थी। वे मद्रासमें अेक बड़े बैंकके खज़ांची थे।

सीतालक्ष्मी बोली—"सेलमवाली लड़की यहाँ क्यों आने लगी? यह आपका भ्रम है।"

"न जाने वह कौन है। कोअी भी हो; बच्चेको गोदमें लिये अिस तरह स्त्रियाँ भीख माँगने लगी हैं; देशकी कैसी दुर्दशा हो रही है!"

"बस, आपको तो हमेशा ही देशका ध्यान लगा हुआ है। पहले अपने कुटुम्बको तो सँभालिये।" अुनकी स्त्रीने कहा।

दूसरे दिन शामको भी रामनाथय्यरके स्मृति-पटसे अुस भिखारिनका रूप दूर नहीं हुआ। वे दफ्तरसे सीधे 'चाअिना बाजार' गये। फिर अेक बार अुससे मिलकर दो-दो बातें कर लेनेकी अुनकी अिच्छा थी। अिसलिये वे होटलके पास ही गाड़ी रोककर कुछ देरतक अुसकी प्रतीक्षा करते रहे। कअी भिखारियोंने 'महाराज, महाराज' कहकर अुन्हें घेर लिया; पर वह वहाँ नहीं थी।

दूसरे शनिवारकी शामको रामनाथय्यर और अुनकी पत्नी दोनों फिर 'चाअिना-बाजार'की तरफ चले।

वह देखिये, आपकी भिखारिन !" सीतालक्ष्मीने कहा।
बच्चेको गोदमें लिये और 'माँ, अेक आना दो। अिस
बच्चेकी ओर आँख अुठाओ मैया !' कहती हुअी वह भिखारिन,
कुछ दूरपर खड़ी दूसरी मोटरकी ओर जल्दीसे दौड़ी।

रामनाथय्यरकी गाड़ीको देखते ही भिखारिन जान गयी
कि अुस गाड़ीमें बैठे हुअे लोग कुछ न देंगे, और अिसीलिये
वह दूसरी गाड़ीके पास चली गयी। भिखारियोंको यह ज्ञान
अनुभवसे होता है। हर अेक बातमें अक्लमंदी और चतुराअी
होती है न ? दूरपर खड़ी हुअी भिखारिनको पास बुलानेमें
रामनाथय्यरको शरम मालूम हुअी। वे कुछ देरतक चुपचाप
खड़े रहे। अुन्होंने सोचा कि वहाँका काम पूरा हो जानेपर
वह अुनके पास आयगी; लेकिन वह भीड़में ग़ायब हो गयी
और फिर कभी न दीख पड़ी।

"अच्छा, चलिये अब घर।" सीतालक्ष्मीने कहा।

आठ दिनके अुपरान्त रामनाथय्यर और सीतालक्ष्मी
सिनेमा देखने गये। खेल था 'नलोपाख्यान'। 'गेट' पर
बड़ी भीड़ थी। नयी 'स्टार' टी. के. धनभाग्यम् दमयन्तीका
पार्ट अदा करनेवाली थी।

लोगोंने कहा—"दूसरे 'शो' में ही जा सकते हैं। अिस
'शो' के लिये टिकट बिक चुके हैं।"

रामनाथय्यरने पूछा—"फिर घर जाकर लौटें तो ?"

सीतालक्ष्मीके जवाब देनेके पहले ही अेक भिखारिन
मोटरके दरवाज़ेके पास आकर बोली—"मैया भीख दो।"

रामनाथय्यरने मुड़कर देखा कि वह सेलमवाली तो नहीं
है। वे अुसीके ध्यानमें लीन थे। यह वह नहीं, दूसरी थी।

"यहाँ गाड़ीको रोकनेसे भिखमंगोंका अुपद्रव है। जल्दी घर चलो, रामन नायर!" सीतालक्ष्मीने ड्राअिवरको आज्ञा दी

अुसी समय अेक पुलिसके सिपाहीने अुस भिखारिनको मार भगाया।

अुसी रातको रामनाथय्यरने स्वप्नमें अुस भिखारिनको देखा। अुन्होंने जिज्ञासा प्रकट की—"तुम देवसेना तो नहीं हो? तुम्हारा गाँव कौन-सा है?"

आनन्दसे प्रफुल्लित आँखवाली भिखारिन बोली—"मालिक, ओ मालिक, आप सेलमके रहनेवाले हैं न? नीमवाले घरके ही हैं न?" अुन्होंने ड्राअिवरसे कहा—"नायर, अिसको गाड़ीमें चढ़ा लो।"

घर आते ही अुनकी पत्नीने पूछा—"यह कौन है? अिस चुड़ैलको क्यों घर लाये?"

"अिसको अपने घरमें खिलाकर क्यों नहीं रख सकते? भोजन देकर चार रुपयेका वेतन भी लगा देंगे।"

"अच्छा विचार किया आपने! दुनिया-भरके निकम्मोंको अपने घरमें आश्रय देंगे! वाह! कैसा बुद्धिमानीका काम किया है! चलो, हटो बाहर!"

भिखारिनने कहा—"माँ, मैं चोरी नहीं करूँगी। तुम जो काम करनेको कहोगी, सो करूँगी।"

सीतालक्ष्मीने कह दिया—"कुछ नहीं हो सकता; चलो बाहर।"

भिखारिनको अेक रुपया देनेके लिये रामनाथय्यर जेबको टटोलने लगे; पर थैली जेबमें नहीं थी। अिधर-अुधर खोजते

खोजते थक गये। भिखारिनका बच्चा ज़ोरसे रोने लगा—वे जाग उठे—स्वप्न था! अुनकी बच्ची राधा विस्तरपर बैठी रो रही थी।

'खैर, सीतालक्ष्मी अितनी निष्ठुर नहीं हो सकती; स्वप्न ही तो है!'—यह सोचकर रामनाथय्यर प्रसन्न हुअे।

अुसके बाद कअी दिनोंतक रामनाथय्यरने बाजार-हाट स्टेशन-सिनेमा—सब जगहोंमें अुसकी खोज की; पर वह भिखारिन अुनको मिली नहीं। कौन जाने, वह क्या हुई?

ठाकुरका कुआँ

जोखूने लोटा मुँहमें लगाया तो पानीसे सख्त बदबू आयी। गंगीसे बोला—"यह कैसा पानी है? मारे बासके पिया नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है और तू सड़ा हुआ पानी पिलाये देती है!"

गंगी प्रतिदिन शामको पानी भर लिया करती थी। कुआँ दूर था; बार-बार जाना मुश्किल था। कल वह पानी लायी तो अुसमें बू बिलकुल न थी; आज पानीमें बदबू कैसी? लोटा नाकसे लगाया, तो सचमुच बदबू थी। ज़रूर कोअी जानवर कुअेंमें गिरकर मर गया होगा; मगर दूसरा पानी आये कहाँसे?

ठाकुरके कुअेंपर कौन चढ़ने देगा? दूर ही से लोग डाँट बतायेंगे। साहूका कुआँ गाँवके अुस सिरेपर है, परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा? चौथा कुआँ गाँवमें है नहीं।

जोखू कओी दिनसे बीमार है। कुछ देरतक तो प्यास रोके चुप पड़ा रहा, फिर बोला—"अब तो मारे प्यासके रहा नहीं जाता। ला, थोड़ा पानी नाक बन्द करके पी लूँ।"

गंगीने पानी न दिया। खराब पानी पीनेसे बीमारी बढ़ जायगी, अितना जानती थी; परन्तु यह न जानती थी कि पानीको अुबाल देनेसे अुसकी खराबी जाती रहती है। बोली-"यह पानी कैसे पिओगे? न-जाने कौन जानवर मरा है। कुअेंसे मैं दूसरा पानी लाये देती हूँ।"

जोखूने आश्चर्यसे अुसकी ओर देखा-"दूसरा पानी कहाँसे लायेगी?"

"ठाकुर और साहूके दो कुअे तो हैं। क्या अेक लोटा पानी न भरने देंगे?"

"हाथ पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा, बैठ चुपकेसे। ब्राह्मण देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहूजी अेकके पाँच लेंगे। गरीबोंका दर्द कौन समझता है? हम तो मर भी जाते हैं, तो कोओी दुआरपर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। अैसे लोग कुअेंसे पानी भरने देंगे?"

अिन शब्दोंमें कड़वा सत्य था। गंगी क्या जवाब देती; किन्तु अुसने वह बदबूदार पानी पीनेको न दिया।

२

रातके नौ बजे थे। थके-माँदे मज़दूर तो सो चुके थे। ठाकुरके दरवाज़ेपर दस-पाँच बे-फ़िक्रे जमा थे। मैदानी बहादुरीका तो अब न ज़माना रहा है, न मौक़ा; कानूनी बहादुरीकी बातें हो रही थीं। कितनी होशियारीसे ठाकुरने

थानेदारको अेक खास मुकद्दमेमें रिश्वत दे दी और साफ निकल गये। कितनी अक्लमन्दीसे अेक मार्केके मुकद्दमेकी नकल ले आये। नाज़िर और मोहतमिम, सभी कहते थे, नक़ल नहीं मिल सकती। कोअी पचास माँगता, कोअी सौ। यहाँ बे-पैसे-कौड़ी नक़ल अुड़ा दी। काम करनेका ढंग चाहिये।

अिसी समय गंगी कुअेंसे पानी लेने पहुँची।

कुप्पीकी धुँधली रोशनी कुअेंपर आ पड़ी थी। गंगी जगतकी आड़में बैठी मौक़ेका अिन्तज़ार करने लगी। अिस कुअेंका पानी सारा गाँव पीता है। किसीके लिये रोक नहीं, सिर्फ ये बदनसीब नहीं भर सकते।

गंगीका विद्रोही दिल रिवाज़ी पाबन्दियों और मज़बूरियों पर चोटें करने लगा—हम क्यों नीच हैं, और ये लोग क्यों अूँच हैं? अिसालिये कि ये लोग गलेमें तागा डाल लेते हैं? यहाँ तो जितने हैं अेकसे अेक छँटे हैं। चोरी ये करें, जाल-फ़रेब ये करें, झूठे मुकद्दमे ये करें। अभी अिसी ठाकुरने तो अुस दिन बेचारे गड़रियेकी अेक भेड़ चुरा ली थी और बादको मारकर खा गया। अिन्हीं पंडितजीके घर तो बारहों मास जुवा होता है। यही साहूजी तो घीमें तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं, मजदूरी देते नानी मरती है। किस बातमें हैं हमसे अूँचे? हाँ, मुँहमें हमसे अूँचे हैं। हम गली-गली चिल्लाते नहीं कि हम अूँचे हैं, हम अूँचे। कभी गाँवमें आ जाती हूँ, तो रस-भरी आँखोंसे देखने लगते हैं, जैसे सबकी छातीपर साँप लोटने लगता है, परन्तु घमंड यह कि हम अूँचे हैं।

कुअेंपर किसीके आनेकी आहट हुअी। गंगीकी छाती धक् धक् करने लगी। कहीं देख लें तो ग़जब हो जाय! अेक लात भी तो नीचे न पड़े। अुसने घड़ा और रस्सी अुठा ली और

झुककर चलती हुअी अेक वृक्षके अँधेरे सायेमें जा खड़ी हुअी। कब अिन लोगोंको दया आती है किसीपर? बेचारे महँगूको अितना मारा कि महीनों लहू थूकता रहा। अिसीलिये तो कि उसने बेगार न दी थी? उसपर ये लोग अूँचे बनते हैं!

कुअेंपर दो स्त्रियाँ पानी भरने आयी थीं। अिनमें बातें हो रही थीं—"खाना खाने चले और हुक्म हुआ कि ताज़ा पानी भर लाओ। घड़ेके लिये पैसे नहीं हैं।"

"हम लोगोंको आरामसे बैठे देखकर जैसे मरदोंको जलन होती है।"

"हाँ, यह तो न हुआ कि कलसिया उठाकर भर लाते। बस, हुक्म चला दिया कि ताज़ा पानी लाओ, जैसे हम लौंडियाँ ही तो हैं।"

"लौंडियाँ नहीं तो और क्या हो तुम? रोटी-कपड़ा नहीं पातीं? दस-पाँच रुपये भी छीन-झपटकर ले ही लेती हो और लौंडियाँ कैसी होती हैं।"

"मत जलाओ, दीदी! दिन-भर आराम करनेको जी तरसकर रह जाता है। अितना काम तो किसी दूसरेके घर कर देती, तो अिससे कहीं आरामसे रहती। अूपरसे यह अेहसान मानना। यहाँ काम करते करते मर जाओ; पर किसीका मुँह ही नहीं सीधा होता।"

दोनों पानी भरकर चली गयीं, तो गंगी वृक्षकी छायासे निकली और कुअेंकी जगत के पास आयी। बे-फिक्रे चले गये थे। ठाकुर भी दरवाजा बंद कर आँगनमें सोने जा रहे थे। गंगीने क्षणिक सुखकी साँस ली। किसी तरह मैदान तो साफ़ हुआ। अमृत चुरा लानेके लिये जो राजकुमार किसी ज़मानेमें

गया था, वह भी शायद अितनी सावधानीके साथ और समझ-बूझकर न गया होगा। गंगी दबे पाँव कुअेंकी जगतपर चढ़ी। विजयका अैसा अनुभव अुसे पहले कभी न हुआ था।

अुसने रस्सीका फन्दा घड़ेमें डाला। दायें-बायें चौकन्नी दृष्टिसे देखा, जैसे कोअी सिपाही रातको शत्रुके क़िलेमें सूराख कर रहा हो। अगर अिस समय वह पकड़ी भी गयी, तो फिर अुसके लिये माफी या रियायतकी रत्ती-भर अुम्मीद नहीं। अन्तमें देवताओंको याद करके अुसने कलेजा कड़ा किया और घड़ा कुअेंमें डाल दिया।

घड़ेने पानीमें गोता लगाया, बहुत ही आहिस्ता। ज़रा भी आवाज़ न हुअी। गंगीने दो-चार हाथ जल्दी जल्दी मारे। घड़ा कुअेंके मुंहतक आ पहुँचा। कोअी बड़ा शहज़ोर पहलवान भी अितनी तेज़ीसे अुसे न खींच सकता था।

गंगी झुकी कि घड़ेको पकड़कर जगतपर रक्खे कि अेकाअेक ठाकुर साहबका दरवाज़ा खुल गया। शेरका भी मुँह अिससे अधिक भयानक न होगा!

गंगीके हाथसे रस्सी छूट गअी। साथही घड़ा पानीमें धड़ाम-से गिरा और कअी क्षणतक पानीमें हलकोरेकी आवाज़ सुनायी देती रही।

ठाकुर 'कौन है? कौन है?' पुकारते हुअे कुअेंकी तरफ़ जा रहे थे और गंगी जगतसे कूदकर भागी जा रही थी।

घर पहुँचकर देखा कि जोखू लोटा मुँहसे लगाये वही मैला-गंदा पानी पी रहा है!

ताअी

" ताअूजी, हमें लेलगाली (रेलगाड़ी) ला दोगे ?" कहता हुआ अेक पंचवर्षीय बालक बाबू रामजीदासकी ओर दौड़ा।

बाबू साहबने दोनों बाँहे फैलाकर कहा—" हाँ बेटा, ला देंगे।"

अुनके अितना कहते कहते बालक अुनके निकट आ गया। अुन्होंने बालकको गोदमें अुठा लिया, और अुसका मुख चूमकर वे बोले—क्या करेगा रेलगाड़ी ?"

" बालक बोला—" अुसमें बैठकर बड़ी दूर जायँगे। हम भी जायँगे, चुन्नीको भी ले जायँगे। बाबूजीको नहीं ले जायँगे। हमें लेलगाली नहीं ला देते। ताअूजी, तुम ला दोगे, तो तुम्हें ले जायँगे।"

बाबू—" और किसे ले जायगा ?"

बालक दम-भर सोचकर बोला—"बछ, और किसीको नहीं ले जायँगे।"

पास ही बाबू रामजीदासकी अर्धांगिनी बैठी थीं। बाबू साहबने अुनकी ओर अिशारा करके कहा—" और अपनी ताअीको नहीं ले जायगा ?"

बालक कुछ देरतक अपनी ताअीकी ओर देखता रहा। ताअीजी अुस समय कुछ चिढ़ी हुअी-सी बैठी थीं। बालकको अुनके मुखका यह भाव अच्छा न लगा। अतअेव वह बोला—" ताअीको नहीं ले जायँगे।"

ताअीजी सुपारी काटती हुअी बोलीं—" अपने ताअूजीको ही ले जा। मेरे अूपर दया रख!"

ताओने यह बात बड़ी रुखाओके साथ कही। बालक ताओके शुष्क व्यवहारको तुरन्त ताड़ गया। बाबू साहबने पूछा—"ताओको क्यों नहीं ले जायगा?"

बालक—"ताओ हमें प्याल (प्यार) नहीं करती?"

बाबू—"जो प्यार करें तो ले जायगा?"

बालकको अिसमें कुछ सन्देह था। ताओका भाव देखकर अुसे यह आशा नहीं थी कि वह प्यार करेंगी। अिससे बालक मौन रहा।

बाबू साहबने फिर पूछा—"क्यों रे, बोलता नहीं? ताओ प्यार करें तो रेलपर बिठाकर ले जायगा?"

बालकने ताअूजीको प्रसन्न करनेके लिये केवल सिर हिलाकर स्वीकार कर लिया, परन्तु मुखसे कुछ नहीं कहा।

बाबू साहब अुसे अपनी अर्धांगिनीजीके पास ले जाकर अुनसे बोले—"लो, अिसे प्यार कर लो, यह तुम्हें भी ले जायगा।"

परन्तु बच्चेकी ताओ श्रीमती रामेश्वरीको पतिकी यह चुहुलबाजी अच्छी न लगी। वह तुनककर बोली—"तुम्हीं रेलपर बैठकर जाओ, मुझे नहीं जाना है।"

बाबू साहबने रामेश्वरीकी बातपर ध्यान नहीं दिया। बच्चेको अुनकी गोदमें बिठालेकी चेष्टा करते हुअे बोले—"प्यार नहीं करोगी, तो फिर रेलमें नहीं बिठायेगा। क्यों रे, मनोहर!"

मनोहरने ताअूकी बातका अुत्तर नहीं दिया। अुधर ताओने मनोहरको अपनी गोदसे ढकेल दिया। मनोहर नीचे गिर पड़ा। शरीरमें तो चोट नहीं लगी; पर हृदयमें चोट लगी। बालक रो पड़ा।

बाबू साहबने बालकको गोदमें अुठा लिया; चुमकारा, पुचकारकर चुप किया, और तत्पश्चात् अुसे कुछ पैसे तथा रेलगाड़ी ला देनेका बचन देकर छोड़ दिया। बालक मनोहर भय-पूर्ण दृष्टिसे अपनी ताअीकी ओर ताकता हुआ अुस स्थानसे चला गया।

मनोहरके चले जानेपर बाबू रामजीदास रामेश्वरीसे बोले—“ तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है ? बच्चेको ढकेल दिया, जो अुसको चोट लग जाती तो ? ”

रामेश्वरी मुँह लटकाकर बोलीं—“ लग जाती, तो अच्छा होता। क्यों मेरी खोपड़ीपर लादे देते थे ? आप ही तो अुसे मेरे अूपर डालते थे, और अब आप ही अैसी बातें करते हैं। ”

बाबू साहब कुढ़कर बोले—“ अिसीको खोपड़ीपर लादना कहते हैं। ”

रामेश्वरी—“ और नहीं किसे कहते हैं ? तुम्हें तो अपने आगे और किसीका दुख-सुख सूझता ही नहीं। न-जाने कब किसका जी कैसा होता है। तुम्हें अिन बातोंकी कुछ परवाह ही नहीं; अपनी चुहलसे काम है। ”

बाबू—“ बच्चोंकी प्यारी-प्यारी बातें सुनकर तो चाहे जैसा जी हो, प्रसन्न हो जाता है; मगर तुम्हारा हृदय न जाने किस धातुका बना हुआ है ! ”

रामेश्वरी—“ तुम्हारा हो जाता होगा। और होनेको होता भी है; मगर वैसा बच्चा भी तो हो ! पराये धनसे भी कहीं घर भरता है ? ”

बाबू साहब कुछ देर चुप रहकर बोले—“यदि अपना सगा भतीजा भी पराया धन कहा जा सकता है, तो फिर मैं नहीं समझता कि अपना धन किसे कहेंगे। ”

रामेश्वरी कुछ अुत्तेजित होकर बोलीं—"बातें बनाना बहुत आता है। तुम्हारा भतीजा है, तुम चाहे जो समझो; पर मुझे ये बातें अच्छी नहीं लगतीं। हमारे भाग ही फूटे हैं, नहीं तो ये दिन काहेको देखने पड़ते? तुम्हारा चलन तो दुनियासे निराला है। आदमी सन्तानके लिये न-जाने क्या क्या करते हैं? पूजा-पाठ कराते हैं, व्रत रखते हैं; पर तुम्हें अिन बातोंसे क्या काम? रात-दिन भाअी-भतीजोंमें मगन रहते हो।"

बाबू साहबके मुखपर घृणाका भाव झलक आया। अुन्होंने कहा—"पूजा-पाठ, व्रत सब ढकोसला है। जो वस्तु भाग्यमें नहीं, वह पूजा-पाठसे कभी प्राप्त नहीं हो सकती। मेरा तो यह अटल विश्वास है।"

श्रीमतीजी कुछ रुआँसे स्वरमें बोलीं—"अिसी विश्वासने तो सब चौपट कर रखा है! अैसे ही विश्वासपर ही बैठे रहें, तो आदमी काहेको किसी बातके लिये चेष्टा करे?"

बाबू साहबने सोचा कि मूर्ख स्त्रीके मुँह लगना ठीक नहीं। अतअेव वह स्त्रीकी बातका कुछ अुत्तर न देकर वहाँसे टल गये।

२

बाबू रामजीदास धनी आदमी हैं। कपड़ेकी आढ़तका काम करते हैं। लेन-देन भी है। अिनके एक छोटा भाअी है। अुसका नाम है कृष्णदास। दोनों भाअीयोंका परिवार अेक ही में है। बाबू रामजीदासकी आयु ३५ वर्षके लगभग है, और छोटे भाअी कृष्णदासकी ३१ के करीब। रामजीदास निस्सन्तान हैं। कृष्णदासके दो सन्तानें हैं। अेक पुत्र—वही पुत्र, जिससे पाठक परिचित हो चुके हैं—और अेक कन्या है। कन्याकी आयु दो वर्षके लगभग है।

रामजीदास अपने छोटे भाओी और अुनकी सन्तानपर बड़ा स्नेह रखते हैं—अैसा स्नेह कि अुसके प्रभावसे अुन्हें अपनी सन्तानहीनता कभी खटकती ही नहीं। छोटे भाओीकी संतानको वे अपनी समझते हैं। दोनों बच्चे भी रामजीदाससे अितने हिले-मिले हैं कि अुन्हें अपने पितासे भी अधिक समझते हैं।

परन्तु रामजीदासकी पत्नी रामेश्वरीको अपनी सन्तान-हीनताका बड़ा दुःख है। वह दिन-रात संतान हीके सोचमें घुला करती है। छोटे भाओीकी संतानपर पतिका प्रेम अुसकी आँखोंमें काँटेकी तरह खटकता है।

रातको भोजन अित्यादिसे निवृत्त होकर रामजीदास शय्यापर लेटे हुअे शीतल और मंद वायुका आनन्द ले रहे थे। पास ही दूसरी शय्यापर रामेश्वरी, हथेलीपर सिर रखे, किसी चिन्तामें डूबी हुअी थी। दोनों बच्चे अभी बाबू साहबके पाससे अुठकर अपनी माँके पास गये थे।

बाबू साहबने अपनी स्त्रीकी ओर करवट लेकर कहा—"आज तुमने मनोहरको अिस बुरी तरहसे ढकेला था कि मुझे अबतक अुसका दुःख है। कभी-कभी तो तुम्हारा व्यवहार बिलकुल ही अमानुषिक हो अुठता है।"

रामेश्वरी बोली—"तुम्हींने मुझे अैसा बना रखा है। अुस दिन अुस पंडितने कहा था कि हम दोनोंके जन्म-पत्रमें सन्तानका जोग है, और अुपाय करनेसे सन्तान हो भी सकती है। अुसने अुपाय भी बताये थे; पर तुमने अुनमेंसे अेक भी अुपाय करके न देखा। बस तुम तो अिन्हीं दोनोंमें मगन हो। तुम्हारी अिस बातसे रात-दिन मेरा कलेजा सुलगता रहता है। आदमी अुपाय तो करके देखता है। फिर होना न होना तो भगवानके अधीन है।"

बाबू साहब हँसकर बोले—"तुम्हारी-जैसी सीधी स्त्री भी...क्या कहूँ, तुम अिन ज्योतिषियोंकी बातोंपर विश्वास करती हो, जो दुनियाभरके झूठे और धूर्त हैं। ये झूठ बोलने ही की रोटियाँ खाते हैं।"

रामेश्वरी तुनककर बोली—"तुम्हें तो सारा संसार झूठा ही दिखाअी पड़ता है। ये पोथी-पुराण भी सब झूठे हैं? पंडित कुछ अपनी तरफसे तो बनाकर कहते ही नहीं हैं; शास्त्रमें जो लिखा है, वही वे भी कहते हैं। शास्त्र झूठा है, तो वे भी झूठे हैं। अँग्रेजी क्या पढ़ी, अपने आगे किसीको गिनते ही नहीं। जो बातें बाप-दादोंके ज़मानेसे चली आयी हैं, अुन्हें भी झूठा बनाते हो।'

बाबू साहब—"तुम बात तो समझती ही नहीं अपनी ही ओटे जाती हो। मैं यह नहीं कहता कि ज्योतिष-शास्त्र झूठा है। संभव है वह सच्चा हो। परन्तु ज्योतिषियोंमें अधिकांश झूठे होते हैं। अुन्हें ज्योतिषका पूर्ण ज्ञान तो होता नहीं, दो-अेक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़कर ज्योतिषी बन बैठते हैं और लोगोंको ठगते फिरते हैं। अैसी दशामें अुनपर कैसे विश्वास किया जा सकता है?"

रामेश्वरी—"हूँ; सब झूठे ही हैं, तुम्हीं अेक सच्चे हो! अच्छा, अेक बात पूछती हूँ। भला, तुम्हारे जीमें सन्तानकी अिच्छा क्या कभी नहीं होती?"

अिस बार रामेश्वरीने बाबू साहबके हृदयका कोमल स्थान पकड़ा। वह कुछ देर चुप रहे। तत्पश्चात् अेक लम्बी साँस लेकर बोले—"भला, ऐसा कौन मनुष्य होगा, जिसके हृदयमें सन्तानका मुख देखनेकी अिच्छा न हो? परन्तु किया क्या जाय? जब नहीं है, और न होनेकी कोअी आशा ही है,

तब अुसके लिये व्यर्थ चिंता करनेसे क्या लाभ? अिसके सिवा, जो बात अपनी सन्तानसे होती, वही भाअीकी सन्तानसे भी हो रही है। जितना स्नेह अपनीपर होता, अुतनाही अिनपर भी है, जो आनन्द अुनकी क्रीड़ासे आता, वही अिनसे भी आ रहा है, फिर मैं नहीं समझता कि चिन्ता क्यों की जाय।"

रामेश्वरी कुढ़कर बोलीं—"तुम्हारी समझको मैं क्या कहूँ? अिसीसे तो रात-दिन जला करती हूँ। भला, यह बताओ कि तुम्हारे पीछे क्या अिन्हींसे तुम्हारा नाम चलेगा?"

बाबू साहब हँसकर बोले—"अरे तुम भी कहाँकी पोच बातें लायीं। नाम सन्तानसे नहीं चलता। नाम अपनी सुकृति से चलता है। तुलसीदासको देशका बच्चा बच्चा जानता है। सूरदासको मरे कितने दिन हो चुके। अिसी प्रकार कितने महात्मा हो गये हैं। अुन सबका नाम क्या अुनकी सन्तान ही की बदौलत चल रहा है? सच पूछो, तो सन्तानसे जितनी नाम चलनेकी आशा रहती है, अुतनी नाम डूब जानेकी भी संभावना रहती है। परन्तु सुकृति अेक अैसी वस्तु है जिससे नाम बढ़नेके सिवा घटनेकी आशंका रहती ही नहीं। हमारे शहरमें राय गिरधारीलाल कितने नामी आदमी थे। अुनके संतान कहाँ है? पर अुनकी धर्मशाला और अनाथालयसे अुनका नाम अब तक चला जा रहा है, और अभी न जाने कितने दिनों तक चला जायगा।"

रामेश्वरी-"शास्त्रमें लिखा है, जिसके पुत्र नहीं होता अुसकी मुक्ति नहीं होती।"

बाबू०-"मुक्तिपर मुझे विश्वास ही नहीं। मुक्ति है किस चिड़ियाका नाम? यदि मुक्ति होना मान भी लिया जाय, तो यह कैसे माना जा सकता है कि सब पुत्रवानोंकी मुक्ति हो

जाती है? मुक्तिका भी क्या सहज अुपाय है? ये जितने पुत्रवाले हैं, सभीकी तो मुक्ति हो ही जाती होगी?"

रामेश्वरी निरुत्तर होकर बोलीं—"अब तुमसे कौन बक-वाद करे? तुम तो अपने सामने किसीको मानते ही नहीं?"

२

मनुष्यका हृदय बड़ा ममत्व-प्रेमी है। कैसी ही अुपयोगी और कितनी ही सुन्दर वस्तु क्यों न हो, जब तक मनुष्य अुसको परायी समझता है, तब तक अुससे प्रेम नहीं करता। किन्तु भद्दीसे-भद्दी और बिलकुल काममें न आने-वाली वस्तुको भी यदि मनुष्य अपनी समझता है, तो अुससे प्रेम करता है। परायी वस्तु कितनी ही मूल्यवान् क्यों न हो, कितनी ही अुपयोगी क्यों न हो, कितनी ही सुन्दर क्यों न हो, अुसके नष्ट होनेपर मनुष्य कुछ भी दुःखका अनुभव नहीं करता, अिसलिये कि वह वस्तु अुसकी नहीं, परायी है। अपनी वस्तु कितनी ही भद्दी हो, काममें न आनेवाली हो, अुसके नष्ट होनेपर मनुष्यको दुःख होता है, अिसलिये कि वह अपनी चीज़ है। कभी कभी अैसा भी होता है कि मनुष्य परायी चीज़-से प्रेम करने लगता है। अैसी दशामें भी जब तक मनुष्य अुस वस्तुको अपनी बनाकर नहीं छोड़ता, अथवा अपने हृदयमें यह विचार नहीं दृढ़ कर लेता कि यह वस्तु मेरी है, तब तक अुसे सन्तोष नहीं होता। ममत्वसे प्रेम अुत्पन्न होता है, और प्रेमसे ममत्व। अिन दोनोंका साथ चोली-दामनका-सा है। वे पृथक नहीं किये जा सकते।

यद्यपि रामेश्वरीको माता बननेका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था, तथापि अुसका हृदय अेक माताका हृदय बननेकी, पूरी योग्यता रखता था। अुसके हृदयमें वे गुण विद्यमान तथा अंतर्निहित थे, जो अेक माताके हृदयमें होते हैं; परन्तु अुनका

विकास नहीं हुआ था। अुसका हृदय अुस भूमिकी तरह था, जिसमें बीज तो पड़ा हुआ है, पर अुसको सींचकर और अिस प्रकार बीजको प्रस्फुटित करके भूमिके अूपर लानेवाला कोअी नहीं। अिसीलिये अुसका हृदय अुन बच्चोंकी ओर खिंचता तो था, परन्तु जब अुसे ध्यान आता था कि ये बच्चे मेरे नहीं, दूसरेके हैं, तब अुसके हृदयमें अुनके प्रति द्वेष अुत्पन्न होता था, घृणा पैदा होती थी, विशेषकर अुस समय अुसके द्वेषकी मात्रा और भी बढ़ जाती थी, जब वह देखती थी कि अुसके पतिदेव अुन बच्चोंपर प्राण देते हैं जो अुसके (रामेश्वरीके) नहीं हैं।

शामका समय था। रामेश्वरी खुली छतपर बैठी हवा खा रही थी। पास ही अुसकी देवरानी भी बैठी थी। दोनों बच्चे छतपर दौड़ दौड़कर खेल रहे थे। रामेश्वरी अुनके खेलको देख रही थी। अिस समय रामेश्वरीको अुन बच्चोंका खेलना-कूदना बड़ा भला मालूम हो रहा था। हवामें अुड़ते हुअे अुनके बाल, कमल की तरह खिले हुअे अुनके नन्हें मुख, अुनकी प्यारी प्यारी तोतली बातें, अुनका चिल्लाना, भागना, लौट जाना, अित्यादि क्रीड़ाअें अुसके हृदयको शीतल कर रही थीं। सहसा मनोहर अपनी बहनको मारने दौड़ा। वह खिलखिलाती हुअी दौड़कर रामेश्वरीकी गोदमें जा गिरी। अुसके पीछे पीछे मनोहर भी दौड़ा हुआ आया, और वह भी अुसकी गोदमें जा गिरा। रामेश्वरी अुस समय सारा द्वेश भूल गयी। अुसने दोनों बच्चोंको अुसी प्रकार हृदयसे लगा लिया, जिस प्रकार वह मनुष्य लगाता है, जो कि बच्चोंके लिये तरस रहा हो। अुसने बड़ी सतृष्णतासे दोनोंको प्यार किया। अुस समय कोअी अपरिचित मनुष्य अुसे देखता, तो अुसे यही विश्वास होता कि रामेश्वरी ही अुन बच्चोंकी माता है।

दोनों बच्चे बड़ी देर तक अुसकी गोदमें खेलते रहे। सहसा अुसी समय किसीके आनेकी आहट पाकर बच्चोंकी माता वहाँसे अुठकर चली गयी।

"मनोहर, ले रेलगाड़ी!" कहते हुअे बाबू रामजीदास छतपर आये। अुनका स्वर सुनते ही दोनों बच्चे रामेश्वरीकी गोदसे तड़पकर निकल भागे। रामजीदासने पहले दोनोंको खूब प्यार किया। फिर बैठकर रेलगाड़ी दिखाने लगे।

अिधर रामेश्वरीकी नींद-सी टूटी। पतिको बच्चोंमें मगन होते देखकर अुसकी भौंहें तन गयीं। बच्चोंके प्रति हृदयमें फिर वही घृणा और द्वेशका भाव जग अुठा।

बच्चोंको रेलगाड़ी देकर बाबू साहब रामेश्वरीके पास आये और मुसकराकर बोले—"आज तो तुम बच्चोंको बड़ा प्यार कर रही थीं! अिससे मालूम होता है कि तुम्हारे हृदयमें भी अिनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।"

रामेश्वरीको पतिकी यह बात बहुत बुरी लगी। अुसे अपनी कमज़ोरीका बहुत बड़ा दुःख हुआ। केवल दुःख ही नहीं, अपने अुपर क्रोध भी आया। वह दुःख और क्रोध पतिके अुक्त वाक्यसे और भी बढ़ गया। अुसकी कमज़ोरी पतिपर प्रकट हो गयी, यह बात अुसके लिये असह्य हो अुठी।

रामजीदास बोले—"अिसीलिये मैं कहता हूँ कि अपनी संतानके लिये सोच करना वृथा है। यदि तुम अिनसे प्रेम करने लगो, तो तुम्हें ये ही अपनी सन्तान प्रतीत होने लगेंगे। मुझे अिस बातसे प्रसन्नता है कि तुम अिनसे स्नेह करना सीख रही हो।"

यह बात बाबू साहबने नितांत शुद्ध हृदयसे कही थीं; परन्तु रामेश्वरीको अिसमें व्यंगकी तीक्ष्ण गंध मालूम हुअी। अुसने कुढ़कर मनमें कहा—"अिन्हें मौत भी नहीं आती। मर जायँ, पाप कटे! आठों पहर आँखोंके सामने रहनेसे प्यार करनेको जी ललचा ही अुठता है। अिनके मारे कलेजा और भी जला करता है।"

बाबू साहबने पत्नीको मौन देखकर कहा—"अब झेंपनेसे क्या लाभ? अपने प्रेमको छिपाना व्यर्थ है। छिपानेकी आवश्यकता भी नहीं!"

रामेश्वरी जल-भुनकर बोली—"मुझे क्या पड़ी है, जो मैं प्रेम करूँगी? तुम्हींको मुबारक रहे! निगोड़े आप ही आ-आकर घुसते हैं। अेक घरमें रहनेसे कभी-कभी हँसना-बोलना पड़ता ही है। अभी परसों ज़रा योंही ढकेल दिया, अुसपर तुमने सैकड़ों बातें सुनायीं। संकटमें प्राण हैं—न यों चैन, न यों चैन।"

बाबू साहबको पत्नीके वाक्य सुनकर बड़ा क्रोध आया। अुन्होंने कर्कश स्वरमें कहा—"न-जाने कैसे हृदयकी स्त्री है। अभी अच्छी खासी बैठी बच्चोंको प्यार कर रही थी। मेरे आते ही गिरगिटकी तरह रंग बदलने लगी। अपनी अिच्छासे चाहे जो करे, पर मेरे कहनेसे बाल्लियों अुछलती है। न-जाने मेरी बातोंमें कौन-सा विष घुला रहता है। यदि मेरा कहना ही बुरा मालूम होता है, तो न कहा करूँगा। पर अितना याद रखो कि अब जो कभी अिनके विषयमें निगोड़े-सिगाड़े अित्यादि अपशब्द निकाले, तो अच्छा न होगा! तुमसे मुझे ये बच्चे कहीं अधिक प्यारे हैं।"

रामेश्वरीने अिसका कोअी अुत्तर न दिया। अपने क्षोभ तथा क्रोधको वह आँखों द्वारा निकालने लगी।

जैसे-ही-जैसे बाबू रामजीदासका स्नेह दोनों बच्चोंपर बढ़ता जाता था, वैसे-ही-वैसे रामेश्वरीके द्वेष और घृणाकी मात्रा भी बढ़ती जाती थी। प्रायः बच्चोंके पीछे पति-पत्नीमें कहा-सुनी हो जाती थी, और रामेश्वरीको पतिके कटु वचन सुनने पड़ते थे, जब रामेश्वरीने यह देखा कि बच्चोंके कारण ही वह पतिकी नजरोंमें गिरती जा रही है, तब अुसके हृदयमें बड़ा तूफान अुठा। अुसने सोचा—'पराये बच्चोंके पीछे यह मुझसे प्रेम कम करते जाते हैं, मुझे हर समय बुरा-भला कहा करते हैं। अिनके लिये ये बच्चे ही सब कुछ हैं, मैं कुछ भी नहीं। दुनिया मरती जाती है, पर अिन दोनोंको मौत नहीं। ये पैदा होते ही क्यों न मर गये? न ये होते, न मुझे ये दिन देखने पड़ते। जिस दिन ये मरेंगे अुस दिन घीके दिये जलाअूँगी। अिन्होंने ही मेरा घर सत्यानाश कर रखा है।'

अिसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुअे। अेक दिन नियमानुसार रामेश्वरी छतपर अकेली बैठी हुअी थी। अुसके हृदयमें अनेक प्रकारके विचार आ रहे थे। विचार और कुछ नहीं, वही अपनी निजकी सन्तानका अभाव, पतिका भाओीकी सन्तानके प्रति अनुराग, अित्यादि। कुछ देर बाद अुसके विचार स्वयं अुसको कष्ट-दायक प्रतीत होने लगे। तब वह अपना ध्यान दूसरी ओर लगानेके लिये अुठकर टहलने लने।

वह टहल ही रही थी, कि मनोहर दौडता हुआ आया। मनोहरको देखकर अुसकी भृकुटि चढ़ गयी, और वह छतकी चहारदीवारीपर हाथ रखकर खड़ी हो गयी।

सन्ध्याका समय था। आकाशमें रंग-बिरंगी पतंगे अुड़ रही थीं। मनोहर कुछ देरतक खड़ा पतंगोंको देखता

और सोचता रहा कि कोअी पतंग कटकर अुसकी छतपर गिरे, तो क्या ही आनन्द आये! देरतक पतंग गिरनेकी आशा करनेके बाद वह दौड़कर रामेश्वरीके पास आया, और अुसकी टाँगोंमें लिपटकर बोला—"ताअी, हमें पतंग मँगा दो।" रामेश्वरीने झिड़ककर कहा—"चल हट, अपने ताअूसे माँग जाकर।"

मनोहर कुछ अप्रतिभ होकर फिर आकाशकी ओर ताकने लगा। थोड़ी देर बाद अुससे फिर न रहा गया। अिस बार अुसने बड़े लाड़में आकर अत्यन्त करुण स्वरमें कहा—"ताअी, पतंग मँगा दो; हम भी अुड़ायेंगे।"

अिस बार अुसकी भोली प्रार्थनासे रामेश्वरीका कलेजा कुछ पसीज गया। वह कुछ देरतक अुसकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखती रही। फिर अुसने अेक लम्बी साँस लेकर मन-ही-मन कहा—'यदि यह मेरा पुत्र होता, तो आज मुझसे बढ़कर भाग्यवान स्त्री संसारमें दूसरी न होती। निगोड़-मारा कितना सुन्दर है, और कैसी प्यारी प्यारी बातें करता है! यही जी चाहता है कि अुठाकर छातीसे लगा लूँ।'

यह सोचकर वह अुसके सिरपर हाथ फेरनेवाली ही थी कि अितनेमें मनोहर अुसे मौन देखकर बोला—"तुम हमें पतंग नहीं मँगवा दोगी, तो ताअूजीसे कहकर तुम्हें पिटवायेंगे।"

यद्यपि बच्चेकी अिस भोली बातमें भी बड़ी मधुरता थी, तथापि रामेश्वरीका मुख क्रोधके मारे लाल हो गया। वह अुसे झिड़ककर बोली-"जा कह दे अपने ताअूजीसे। देखूँ, वह मेरा क्या कर लेंगे!"

मनोहर भयभीत होकर अुनके पाससे हट आया, और फिर सतृष्ण नेत्रोंसे आकाशमें अुड़ती हुअी पंतगोंको देखने लगा।

अिधर रामेश्वरीने सोचा—'यह सब ताअूजीके दुलारका फल है कि बालिस्त-भरका लड़का मुझे धमकाता है। अीश्वर करे, अिस दुलारपर बिजली टूटे।'

अुसी समय आकाशसे अेक पतंग कटकर अुसी छतकी ओर आयी, और रामेश्वरीके अूपरसे होती हुअी छज्जेकी ओर गयी। छतके चारों ओर चहारदीवारी थी। जहाँ रामेश्वरी खड़ी हुअी थी, केवल वहाँपर अेक द्वार था, जिससे छज्जेपर आ-जा सकते थे। रामेश्वरी अुस द्वारसे सटी हुअी खड़ी थी। मनोहरने पतंगको छज्जेपर जाते देखा। पतंग पकड़नेके लिये वह दौड़कर छज्जेकी ओर चला। रामेश्वरी खड़ी देखती रही। मनोहर अुसके पास होकर पतंगको देखने लगा। पतंग छज्जेपरसे होती हुअी नीचे, घरके आँगनमें, जा गिरी। अेक पैर छज्जेकी मुँडेरपर रखकर मनोहरने नीचे, आँगनमें, झाँका और पतंगको आँगनमें गिरते देख प्रसन्नताके मारे फूला न समाया। वह नीचे जानेके लिये शीघ्रतासे घूमा। परन्तु घूमते समय मुँडेरपरसे अुसका पैर फिसल गया। वह नीचेकी ओर चला। नीचे जाते जाते अुसके दोनों हाथोंमें मुँडेर आ गयी। वह अुसे पकड़कर लटक गया, और रामेश्वरीकी ओर देखकर चिल्लाया—"ताअी!"

रामेश्वरीने धड़कते हुअे अिस घटनाको देखा। अुसके मनमें आया कि अच्छा है, मरने दो, सदाका पाप कट जायगा। यही सोचकर वह अेक क्षणके लिये रुकी। अुधर मनोहरके हाथ मुँडेरपरसे फिसलने लगे। वह अत्यन्त भय तथा करुण नेत्रोंसे रामेश्वरीकी ओर देखकर चिल्लाया—"अरी ताअी!" रामेश्वरीकी आँखें मनोहरकी आँखोंसे जा मिलीं। मनोहरकी वह करुण दृष्टि देखकर रामेश्वरीका कलेजा मुँहको आ गया।

अुसने व्याकुल होकर मनोहरको पकड़नेके लिये अपना हाथ बढ़ाया। अुसका हाथ मनोहरके हाथतक पहुँचा ही था कि मनोहरके हाथसे मुँडेर छूट गयी। वह नीचे आ गिरा। रामेश्वरी चीख़ मारकर छज्जेपर गिर पड़ी।

रामेश्वरी अेक सप्ताह तक बुखारमें वेहोश पड़ी रही। कभी कभी वह ज़ोरसे चिल्ला अुठती, और कहती–'देखो, देखो, वह गिरा जा रहा है—अुसे बचाओ—दौड़ो—मेरे मनोहरको बचा लो।" कभी वह कहती—"बेटा मनोहर, मैंने तुझे नहीं बचाया। हाँ, हाँ, चाहती तो बचा सकती थी—मैंने देर कर दी।" अिसी प्रकारके प्रलाप वह किया करती।

मनोहरकी टाँग अुखड़ गयी थी। टाँग बिठा दी गयी। वह क्रमशः फिर अपनी असली हालतपर आने लगा।

अेक सप्ताह बाद रामेश्वरीका ज्वर कम हुआ। अच्छी तरह होश आनेपर अुसने पूछा—"मनोहर कैसा है?"

रामजीदासने अुत्तर दिया—"अच्छा है।"

रामेश्वरी—"अुसे मेरे पास लाओ।"

मनोहर रामेश्वरीके पास लाया गया। रामेश्वरीने अुसे प्यारसे हृदयसे लगाया। आँखोंसे आँसुओंकी झड़ी लग गयी। हिचकियोंसे गला रुँध गया।

रामेश्वरी कुछ दिनोंके बाद पूर्ण स्वस्थ हो गयी। अब मनोहरकी बहन चुन्नीसे भी द्वेष और घृणा नहीं करती। और मनोहर तो अुसका प्राणाधर हो गया है। अुसके बिना अुसे अेक क्षण भी कल नहीं पड़ती।

चचेरे भाओी

दिनकरलाल अेक प्राचीन देसाओी परिवारके वंशज थे। अुन्होंने तो नहीं, मगर अुनके पूर्वजोंने गुजरातकी बादशाहत क़ायम करनेमें बहुत आगे बढ़कर काम किया था। अुस बादशाहतके कमज़ोर पड़नेपर गुजरातमें मुग़लोंको लाने और अुनकी हुकूमत ज़मानेमें अुनके दूसरे पूर्वजोंने अपने प्राण न्योछावर किये थे। जब मुग़लोंकी साख भी डगमगाने लगी तो पेशवा-गायकवाड़को अिन्हीं देशाअियोंके किसी पूर्वजकी सहायता लेनी पड़ी; और मराठोंका सूर्यास्त होनेपर देशाअियोंने कम्पनी बहादुरकी भी मदद की। दिनकरलाल देसाअीका यह दृढ़ विश्वास था कि देसाअियोंकी सहायताके बिना अिनमेंसे अेक भी राज्य क़ायम न हो सका होता। अिसके प्रमाणमें वे बीसों-मराठीकी अनेक चिट्ठियों, सनदों, प्रमाण-पत्रों, फ़रमानों और ख़रीतोंके—पुराने बंडल सबको दिखाया करते थे। और अिस ख़यालसे कि शायद अितना काफी न हो, वे अपने श्रोताओंको कोअी पच्चीस देसाअीयोंका दिलचस्प अितिहास सुनाया और सिखाया करते थे।

श्री दिनकरलाल बड़े विस्तारके साथ—सन् सम्वत् और तारीखका हवाला देकर—अपने श्रोताओंको सारा अितिहास सुनाया करते। वह कहते— "महम्मद बेगड़ाकी भूखों मरती फ़ौजके पास अैन मोक़ेपर निहायत चतुराअीके साथ नाजके बोरे किसने पहुँचाये? अिन्द्रजीत देसाअीने। शिकार खेलते हुअे जब बादशाह अकबर जंगलमें रास्ता भूल गये तो अुनके लिये जलपानका निहायत सुन्दर प्रबन्ध किसने किया? पद्मनाभ देसाअीने। बारिशके दिनोंमें जब औरंगजेबका

अेक हाथी दलदलमें फँस गया तो देहातियोंका अेक दल जुटाकर पूरे के-पूरे हाथीको दलदलसे बाहर किसने निकाला? कुँवरजी देसाअीने। गोविन्दराव गायकवाड़की पराजित सेनाको प्रोत्साहित करके अंग्रेज़ बहादुरोंके छक्के किसने छुड़ाये? मुरलीधर देसाअीने।

अभी तक आधुनिक ढंगसे अिस बातका कोअी अन्वेषण नहीं हो पाया कि अितिहासकारोंने अिनमेंसे किसी घटनाका अपने अितिहासमें कहीं अुल्लेख भी किया है या नहीं। वह जो कुछ भी हो; अिसमें कोअी शक नहीं कि देसाअीगिरीका अभिमान घटानेवाले श्री दिनकरलालके पूर्वजोंने काफ़ी बड़ी ज़मींदारी पायी थी और देसाअियोंके वैभव और प्रतिष्ठाकी किसी समय बड़ी धूम थी।

धूम थी अिसलिये कहता हूँ कि दिनकरलालके समयमें यह वैभव और यह प्रतिष्ठा अतीतके अन्धकारमें विलीन होने लगी थी। अुनका अपना अेक आलीशान मकान था, घरमें नौकर-चाकरोंकी कमी न थी। बैलगाड़ी थी, बग्घी थी, मगर अुसका घोड़ा मर चुका था और नया ख़रीदनेकी चर्चा थी। मेहमानोंका ताँता बँधा रहता था। कलेक्टर, असिस्टैंट कलेक्टर, तहसीलदार, रेलवे अधिकारी, सभी दिनकरलाल देसाअीके मेहमान होते थे और अुनकी दावतोंमें वह ज़रूर हाज़िर रहते थे। दिनकरलाल आग्रह-अनुरोधकी कलामें प्रवीण थे। हर महीने दावतें झड़ती थीं और दावतोंके ये अवसर देसाअीगिरीकी गौरव-वृद्धिके साथ स्वयं भी वृद्धिंगत होते जाते थे।

दावतोंमें शरीक होनेवालोंको देसाअीकी आर्थिक स्थितिके विचार करनेकी तनिक भी आवश्यकता न थी। लेकिन अुनके साहूकारोंको अेकाअेक अिसके विचार करनेकी

ज़रूरत मालूम हुअी। अबतक तो अपनी ज़मीनें रेहन रख रखकर देसाअी मनमाना धन पाते रहे; लेकिन अब साहूकारोंने बहानोंसे काम लेना शुरू किया, और वे दिनकरलालके रुक्कोंको लौटाने लगे, अुन्हें क़र्ज देनेसे आनाकानी करने लगे। अुनकी साखपर तो पहले ही कोअी अुन्हें क़र्ज देता न था; अब ज़मीनें भी सब रेहन रखी जा चुकी थीं, अिसलिये आसपासके सभी साहूकार चौकन्ने हो गये थे और हाथ खोलते नहीं थे।

देसाअीका यह ख़याल था कि यह सब साहूकारोंके ओछेपनका परिणाम है। साहूकार हमेशा ओछे ही होते हैं। मूलधनसे तिगुनी चौगुनी रक़म ब्याजमें ले लेनेके बाद भी अुनका कर्ज़ बना रहता है। साहूकारोंका यह जादू तो शायद परमात्मा भी न जानता होगा। कैसे आश्चर्यकी बात है कि जो लोग जीवन-भर बँटाअी, पगड़ी, दलाली, थैली छुड़ाअी आदिकी शानदार धार्मिक क्रियाओंके बाद दुगुने-चौगुने ब्याजपर रक़म अुधार देते हैं, वही अदालतमें दावा-तक करनेकी नीचता प्रकट करते हैं!

२

दिनकर देसाअी साहूकारोंके अिस ओछेपनेको, अुनकी अिस क्षुद्रताको सह लेते थे; लेकिन अपने चचेरे भाअी विजयलाल देसाअीकी नीचता अुनसे तनिक भी न सही जाती थी। कुछ वर्ष तो दोनोंने मिलकर देसाअीगिरी की; लेकिन सूक्ष्म-दृष्टि विजयलाल 'विजू देसाअी' अपने समवयस्क और सम-समान मालिक दिनकरलालकी अुदारतासे, जिसे फिज़ूलखर्ची कहकर वह अपने मनकी क्षुद्रता प्रकट करते थे, घबरा अुठे और दीवानी अदालततक जाकर अलगौझा करा लिया। फिर अपने हिस्सेकी संपत्ति लेकर वे स्वतन्त्र रूपसे अपना कारोबार चलाने लगे।

दिनकर देसाओीको अिससे ज़रा भी प्रसन्नता न हुअी। जो परिवार कअी पुश्तोंसे अेक रहकर अपने पूर्वजोंकी संपत्तिका अुपभोग कर रहा था, अुसका यों खण्ड-खण्ड हो जाना अुन्हें अच्छा न लगा। अिस घटनासे दोनों भाअियोंके दिलमें गहरी गाँठ पड़ गयी। दोनों अेक दूसरेके दुश्मन भी बन गये। और यद्यपि अपने पराक्रमी पूर्वजोंकी तरह तलवार हाथमें लेकर परस्पर लड़नेकी शूरता किसीमें न थी, फिर भी गाली-गलौज, तेरी-मेरी और तानो-तिरनोंके प्रयोग द्वारा वे बार-बार अपनी वीरताका परिचय दिया करते थे।

दोनोंके घरकी दीवार अेक ही थी। अेक ही घरके दो हिस्से कर लिये गये थे; अिसलिये प्रकट युद्धके अवसरोंके अतिरिक्त भी वे टीका-टिप्पणी द्वारा अेक-दूसरेपर छींटे अुड़ाकर लड़नेका आनन्द अुठा लिया करते थे।

"अुसे देसाओी कहता कौन है? वह तो बनिया है, बनिया। ज़रा अुसका दिल तो देखो!" कहते समय दिनकर देसाओी अपनी आवाज़को अितना बुलन्द करते कि दोनों घरके लोग भली-भाँति सुन लेते।

यह सोचकर कि ये छींटे मुझीपर अुड़ाये जा रहे हैं, विजू देसाओीका चेहरा तमतमा अुठता—वह आग-बबूला हो जाते। अुन्हें याद आता था कि यह दिनकर कलेक्टरों और कमिश्नरोंको दावतें देता है, फूलोंके इतर पहनाता है और झूलेपर बैठकर मौजसे अपने पुरखोंके गीत गाया करता है। बस, दूसरी तरफसे वह भी गरज अुठते—

"शेखीखोर कहींका! सारी देसाओीगिरी डुबोने बैठा है!"

दिनकर देसाओी झूलेपरसे आधे अुठ बैठते और चिल्लाकर पूछते—

"तू किसे कह रहा है?"

"तुझीको ! तुझमें अितना समझनेकी अक्ल भी तो हो !"

"बड़ा अक्लवर है तू ? धनके हण्डे गाड़कर जायगा न ? साँप बनकर बैठेगा, साँप ! कम्बख्त कहींका !"

और वहीं अेक छोटा-सा युद्ध छिड़ जाता।

अिन युद्धोंमें योद्धा ये दो भाओी ही होते थे। अिनके घरके स्त्री-बच्चोंपर अिन युद्धोंका कोओी असर दिखाओी नहीं देता था। जब दिनकर देसाओी और विजय देसाओी यों आपसमें अेक-दूसरे की पगड़ी अुछालते और प्रहार करते तब दोनों देसाओी-पत्नियाँ या तो अचार-मुरब्बेकी तैयारीमें लगी मिलतीं, या गहनों-कपड़ोंकी चर्चामें। कभी विजय देसाओीकी पत्नी दिनकर देसाओीकी पुत्रीके बाल सँवारती मिलती, और कभी दिनकर देसाओीकी पत्नी विजय देसाओीके पुत्रको जिमाती होती। देसाओीयोंके युद्धकी विशेषता यह थी कि वह वह अुन्हींतक रहता था। कौन कह सकता है कि हमारा सूर्य दूसरे सूर्यके साथ खींचातानी न करता होगा ? फिर भी हमारी पृथ्वीको अुनकी खींचातानीसे कोओी सरोकार नहीं। अुसे तो अुनके झगड़ेका आभासतक नहीं होता। ठीक यही दशा अिन दो युद्धप्रिय चचेरे भाअियोंके परिवारकी थी—वे अिनके युद्धसे बिलकुल अछूते थे।

दावतके दिन विजय देसाओीको न्यौते विना दिनकर देसाओीसे रहा न जाता। लेकिन विजय देसाओी कदाचित् ही अुनमें शामिल होते। अैसे समय दिनकरलाल यह कहते सुने जाते—

"वह क्यों आये ? कौन मुँह लेकर आये ? कभी किसीको घर बुलाकर खिलाता भी है ?"

और विजय देसाओी कहते—

"यह दिनकर कैसा बुद्धू है? अिसे कब अक़्ल आयेगी? मूर्ख खिलाते हैं और मक्कार खाते हैं।"

लेकिन जिस दिन किसी नये अधिकारीको दावत दी जाती और विजय देसाअीको मजबूर हो जाना पड़ता, तो दिनकर देसाअी ख़ास तौरसे अुनका परिचय कराते। कहते—

"साहब, ये मेरे भाअी हैं। अेक साथ पले हैं और अेक ही पिताका अन्न खाते हैं।"

"अच्छा, अैसी बात है!"—कहते हुअे साहब मुसकराते और देसाअियोंके जीवनमें रस लेनेका अभिनय-सा करते।

"जी हुजूर! बड़े-बूढ़ोंका पुण्य अभी तक साथ दे रहा है।" विजय देसाअीको भी नम्र होकर कहना पड़ता।

लेकिन दावतके ख़तम होते ही, दोनों भाअी फिर अुलझ पड़ते। दोनोंको अेक-दूसरेसे अितनी अरुचि हो गयी थी, कि सिवा लड़नेके आपसमें और किसी समय वे बोलतेतक न थे। दिनकर देसाअी अकेले अधिकारियोंकी ही ख़ातिर-तवाज़ा न करते थे, बल्कि अतिथि-सत्कार और दान-मानके हर काममें अुनका नाम सबसे आगे रहता था। फिर साधुओंकी जमातको जिमानेका काम हो, सप्ताह-भर रामायण-महाभारतका पाठ करनेवाले शास्त्रीको पगड़ी-दुपट्टा भेंट करनेका काम हो, किसी अुस्ताद गवैयेके अिनाम-अिकरामका सवाल हो, या रामलीलाके प्रबन्ध करनेकी बात हो, वह कहीं पीछे न रहते थे। विजय देसाअी अिन सब कामोंमें कभी सहयोग न देते, और जब देना ही पड़ता, तो रुपया-आठ आना देकर पिण्ड छुड़ा लेते।

कभी कभी कुछ अुत्साही चन्देवाले विजय देसाअीकी तारीफ़का पुल बाँधकर अुन्हें चढ़ानेकी कोशिश करते—

"विजय दादा यह देखो, दिनकर भैयाने अितने दिये हैं; आप अिससे कम कैसे दे सकते हैं?"

विजय देसाओीको यह तुलना तनिक भी न रुचती। वे टका-सा जवाब देते—

"अुसे तो भीख माँगनी है। मैं भिखारी नहीं बनना चाहता।"

अुधर दिनकर देसाओीका क्षोभ देखनेकी अेक चीज़ होती। वे अुत्तेजित होकर चन्दा माँगनेवालोंसे कहते—

"अुससे तुम क्या पाओगे? अरे, वह तो अैसा सूँजी है कि सुबह मुँह देख लो, तो दिन-भर अन्नके दर्शन न हों!"

अिधर कुछ दिनसे रोज दिनके चार बजे दिनकर देसाओी किसी भाटसे देसाओी वीरोंकी कीर्ति-कथा सुना करते थे। अन्तमें अेक दुशाला भेंट किया। भाटने तुरन्त ही दिनकर देसाओीकी तारीफ़में अेक कवित्त पढ़ा। आशुकविकी प्रतिभावाले अुस देवी-पुत्रने दिनकर देसाओीको सूर्य कहा, चन्द्र कहा, चक्रवर्ती कहा, समुद्रसे भी महान् और हिमालय से भी उच्च सिद्ध करके कुबेरको भी देसाओीका क़र्ज़दार घोषित कर दिया! अिधर भाट अपना पुरस्कार लेकर बिदा हुआ और अुधर देसाओीके अेक पुराने साहूकारने अेक-दो सिपाहियों और मुहर्रिरोंके साथ अुनके घरमें प्रवेश किया। साहूकार ज़ब्ती लेकर आया था। मुंसिफको पाँच-सात बार हरी जुवारके होलेकी दावत देकर और अुपयोगके लिये एक आलमारी अुनके घर भेजकर दिनकर देसाओी निश्चिंत हो गये थे। अुन्होंने कभी सोचातक नहीं कि मुंसिफ अितनी जल्दी ज़ब्तीका हुक्म जारी कर देगा। कओी मामलोंमें ठीक ठीक मेहनताना न मिलनेसे देसाओीजीके वकील भी अुस दिन डुबकी लगा गये।

देसाअीजी बहुत बिगड़े। मानहानिके लिये मुकद्दमा चलानेकी धमकी देने लगे। गवर्नर साहबके नाम तार करनेको तैयार हो गये। शामके पहले साहूकारको अुसकी रक़म चुका देनेका वादा किया। मगर साहूकार टस-से-मस न हुआ। वह तो ज़ब्तीका अिरादा करके ही आया था। देसाअीजीकी सभी युक्तियाँ बेकार हो गयीं। बेचारे हताश हो गये।

अुधर बेलिफ़ और मुहर्रिरोंने साहूकार द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंको ज़ब्त करना शुरू किया।

विजय देसाअी पास ही आँगनमें झूलेपर बैठे सारा दृश्य देख रहे थे। अुनकी मुख-मुद्रा स्थिर और कठोर भाव धारण करती जा रही थी। अितनेमें अुनकी पत्नी अेकाअेक बाहर आयी और बोली—“ भैयाके घर ज़ब्ती आयी है। ”

“ अुसकी तक़दीर ! मैं क्या करूँ ? ”

“ क्या कहते हो ? यह तो अच्छा नहीं मालूम होता। कुछ करना चाहिये। ”

“ करें अुसके यार-दोस्त। कलक्टरों और कमिश्नरोंको बहुत खिलाया है। वे सब मर थोड़े ही गये हैं ? क्यों नहीं मदद करते ? ”

“ कुछ दे-दिलाकर अभी तो अिस सेठको बिदा करो ! ”

“ चार चार, पाँच पाँच बार मैं बीच में पड़ा, जमानतें दीं, लेकिन यह अपनी आदतसे बाज नहीं आता। अब यही हालत रही तो अुसे खुद भी बिकना पड़ेगा। ”

यों कहते हुअे विजय देसाअी झूलेपरसे अुतर पड़े और ओसारेमें टहलने लगे। ज़ब्ती कारकुनने बाहर आकर विजय देसाअीसे प्रार्थना की—“ देसाअीजी, ज़रा पंचनामेमें मदद कीजियेगा ? ”

"जाओ जाओ, किसी दूसरेको बुलाओ। मुझे फुरसत नहीं है।" कहकर देसाअी अन्दर चले गये। कुछ देर बाद कपड़े पहनकर वे फिर बाहर आये। ओसारेमें अुनकी पत्नी अेक युवतीको अपनी छातीसे लगाये अुसके आँसू पोंछ रही थी। विजय देसाअीने जब यह दृश्य देखा तो वे बोले—"क्यों बेटा ! तू क्यों रो रही है ?"

रोती हुअी युवतीने आँचलसे आँसू पोंछते हुअे कहा—"कुछ नहीं, चाचाजी !"

यह युवती दिनकर देसाअीकी पुत्री पद्मा थी।

विजय देसाअीने आश्वासन-भरी वाणीमें कहा—"तू घबराती है। देसाअियोंका काम तो अैसे ही चलता है। कभी ज़ब्ती भी आ जाती है।"

"लेकिन अिनके दहेजके गहने भी ज़ब्त हो रहे हैं।" देसाअीकी पत्नीने कहा।

पद्माकी आँखें फिर डबाडबा आयीं। दहेजमें मिले हुअे गहनोंकी अैसी दुर्दशा होते देख अुसकी छाती फटी जाती थी।

"बेटा, रोओ मत। किसकी मजाल है कि तेरे गहनोंको हाथ लगाये।?" कहते हुअे देसाअीने चाबियोंका अेक गुच्छा पत्नीकी ओर फेंक दिया।

"अुस छोटी पेटीमें नोटोंका बंडल पड़ा है। जाकर अुसे निकाल लाओ।"

'देसाअिन' दौड़ी गयी और नोटोंका अेक बंडल लेकर तुरन्त ही लौट आयी। देसाअीने वह बंडल पद्माको दिया और आदेशपूर्वक कहा—'जाओ बेटी, अपने बापूको यह दे आओ।"

पद्मा नोट लेकर घर दौड़ी गयी। लेकिन जितनी फुरतीसे वह गयी थी, अुतनी ही फुरतीसे लौट आयी।

अुसने दुःख-भरे स्वरमें कहा—"बापू लेनेसे अिनकार करते हैं, अुन्होंने नोट फेंक दिये।"

विजय देसाअी अेकाअेक गरज अुठे—"बड़ा लखपती है! वनमाली सेठ!"

वनमाली सेठने खिड़कीकी राह देखा। विजय देसाअीने घुड़कीभरी आवाज़में कहा—"अुतर नीचे, बेशरम कहींके! तेरी यह हिम्मत कि बगैर मुझसे पूछे घरमें घुस गया?"

सेठने कहा—"देसाअीजी, जब मैं आया, आप सामने ही बैठे थे!"

"चल, सँभाल अपने पैसे और रास्ता नाप! ब्याज-ही ब्याजमें लोगोंको बरबाद कर डाला। हरामखोर कहींका!"

अिसी वक्त दिनकरलाल देसाअी लाल-पीले होते हुअे नीचे आये और विजयलालसे अुलझ पड़े—"तू कौन होता है पैसे देनेवाला! मेरी अिज्ज़त लेने बैठा है?"

"रहने दे भाअी, रहने दे! घरमें बैठ! तेरी अिज्ज़त कितनी है, सो मैं जानता हूँ।"

"तुझसे किसने कहा था कि तू पैसे दे? बलासे मेरा घर नीलाम हो जाय! तेरा अिसमें क्या नुक़सान है?"

"तो तुझे दिये किसने हैं पैसे?"

"तो किसे दिये हैं?"

"अपनी बेटीको दिये हैं। तू अुसके गहने ज़ब्त होने दे और मैं बैठा देखता रहूँ?"

"बेटी! पद्मा तेरी बेटी है?"

"हाँ, मेरी बेटी है। सात नहीं, सत्तासी बार मेरी है। अकेले तेरी ही वह बेटी नहीं है। वह देसाअियोंकी बेटी है। सातों पीढ़ीकी बेटी है।"

"आखिर तू अपनी भाअीबन्दी जताकर ही रहा! सबके सामने तूने मेरा पानी अुतार लिया।" यों बड़बड़ाते हुअे दिनकर देसाअी अपने हिंडोलेपर जा बैठे।

चाँदीके पानदानसे दो पान निकालकर अुन्होंने सुनहले वर्कके दो बीड़े बाँधे और पद्‌माके हाथमें अेक बीड़ा देते हुअे कहा—"पद्‌मा, जा दे आ अपने चाचाको।"

दोनों भाअी अिस तरह प्रतिदिन बिना बोले बीड़ोंका आदान-प्रदान करते रहते थे। वे कितने ही क्यों न लड़े-भिड़े हों, मगर लड़ाअी-झगड़ेके बावजूद भी कोअी दिन अैसा न जाता था जब दिनकर देसाअीका बाँधा हुआ बीड़ा विजय देसाअीने न खाया हो।

तकियेका सहारा लेकर अपने पूर्वजोंके पराक्रमोंका सिंहावलोकन करते करते आज दिनकरलालके दिलमें अेक विचार फिर फिर आता रहता था—

'विजय कैसा ही क्यों न हो, आखिर है तो वह देसाअी बच्चा न?'

महेश

गाँवका नाम काशीपुर है। गाँव छोटा-सा है और वहाँके ज़मींदार और भी छोटे हैं। लेकिन फिर भी अुनके रोबके मारे कोअी प्रजा चूँतक नहीं कर सकती अैसा अुनका प्रताप है।'

आज अुनके छोटे लड़केकी बरस-गाँठकी पूजा थी। पूजाके सब काम समाप्त करके तर्करत्न महाशय दोपहरके समय अपने घर लौट रहे थे। वैशाखका प्रायः अन्त हो रहा

था, लेकिन आकाशमें कहीं मेघकी छाया भी नहीं दिखाअी देती थी। अनावृष्टिके कारण आकाशसे मानो आग बरस रही थी।

सामने दिगन्ततक फैला हुआ मैदान जल-भुनकर खंड-खंड हो रहा था और अुसकी लाखों दरारोंमेंसे पृथ्वीके कलेजेका रक्त निरन्तर धुवाँ बनकर निकल रहा था। अग्नि-शिखाकी तरह अुसकी सर्पिल अूर्ध्व गतिकी ओर देखनेसे सिर चकरा जाता था, मानो अेक नशा-सा चढ़ आता था।

अिसकी सिवानपर जो रास्ता था, अुसी रास्तेके अेक किनारे गफ़ूर जुलाहेका मकान था। अुस मकानकी मिट्टीकी चहारदीवारी आँगनमें गिरकर रास्तेके साथ मिल गयी थी और अुसके अन्तःपुरका लज्जा-सम्भ्रम पथिकोंकी करुणाके सामने आत्म-समर्पण करके निश्चिंत हो गया था।

रास्तेके पास ही अेक पेड़की छायाके नीचे खड़े होकर तर्करत्न महाशयने ज़ोरोंसे पुकारा—"अबे ओ गफ़ूर! अरे घरमें है?"

अुसकी दस बरसकी लड़कीने दरवाज़ेपर आकर कहा—"अब्बाको बुलाते हैं? अुन्हें बुख़ार आया है।"

तर्क०—"बुख़ार! बुला ला अुस हरामजादेको, पाखंडी म्लेच्छ!"

ये सब बातें सुनकर गफ़ूर बाहर निकला और मारे बुख़ारके काँपता हुआ अुनके पास आ खड़ा हुआ। टूटी हुअी चहारदीवारीके साथ ही बबूलका अेक पुराना पेड़ सटा हुआ खड़ा था, जिसकी डालमें अेक बैल बँधा हुआ था। तर्करत्नने अुसीकी ओर दिखलाते हुअे कहा—"भला बतलाओ तो, यह सब क्या हो रहा है? यह जानते हो कि यह हिन्दुओंका गाँव है, और यहाँके जमींदार ब्राह्मण हैं?"

तर्करत्नका मुख मारे क्रोध और धूपके लाल हो रहा था, अिसलिय अुसमेंसे जो वाक्य निकलते थे, वे भी तप्त और अंगारेकी ही तरह होते थे; लेकिन बेचारे गफूरकी समझमें अिसका कुछ भी मतलब नहीं आ रहा था, अिसलिये वह चुपचाप अुनका मुँह ही ताकता रहा।

तर्करत्नने कहा—"सबेरे जानेके समय मैं देख गया था कि यह बैल यहीं बँधा था, और अब दोपहरके समय लौटनेपर भी देख रहा हूँ कि यह ज्यों-का-त्यों यहीं बँधा है। अगर कहीं गो-हत्या हो गयी तो मालिक तुम्हें जीते-जी कब्रमें गाड़ देंगे। वह अैसे-वैसे ब्राह्मण नहीं हैं।"

गफूरने कहा—"महाराज, क्या करूँ, मैं बहुत ही लाचारीमें पड़ गया हूँ। मुझे कअी दिनसे बुखार आ रहा है। मैं चाहता हूँ कि अिसका पगहा पकड़कर अिसे कहीं ले जाकर ज़रा चरा लाअूँ! लेकिन सिरमें अैसा चक्कर आ रहा है कि गिर-गिर पड़ता हूँ।"

तर्क०—"तो फिर अिसे खोल दो। यह आप ही जाकर चर आयेगा।"

गफूर—"महाराज, मैं अिसे कहा छोड़ूँ? अभी लोगोंके धानकी दँवरी नहीं हुअी है। अपना पुआल भी लोगोंने खलिहानसे नहीं हटाया है। मैदानकी सारी घास जल गयी है। कहीं अेक मुट्ठी घास नहीं है। कहीं किसीके धानमें मुँह डालेगा तो कहीं किसीकी राशिमेंसे खाने लगेगा। अब भला महाराज, मैं अिसे कैसे छोड़ सकता हूँ?"

तर्करत्नने कुछ नरम होकर कहा—"अगर तुम अिसे नहीं छोड़ सकते हो तो कहीं ठंडेमें ही अिसे बाँध दो और दो आँटी पुआल ही अिसके आगे डाल दो। तब वक्त

वही चबायेगा। तुम्हारी लड़कीने अभी भात नहीं बनाया है? जरा-सा माँड़ ही अिसके आगे रख दो। वही पिये।"

लेकिन गफूरने कोअी जवाब नहीं दिया। अुसने निरुपायोंकी भाँति अेक बार तर्करत्नके मुँहकी ओर देखा और तब स्वयं अुसके मुखसे केवल अेक दीर्घ निश्वास निकला।

तर्करत्नने कहा—"मालूम होता है कि वह भी नहीं है। आखिर तुमने अपना धान्य क्या किया? तुम्हें हिस्सेमें जो कुछ मिला था वह सब बेचकर 'पटाय नमः' कर डाला। गोरूके लिये अेक आँटी भी बचाकर न रखी? कसाअी कहींका!"

यह निष्ठुर अभियोग सुनकर गफूरकी मानो बोलती ही बन्द हो गयी। थोड़ी देर बाद अुसने धीरे-धीरे कहा—"जो पन्द्रह-सोलह मन धान अिस बार हिस्सेमें मिला था, वह भी पिछले सालके बकाया लगानमें मालिकने ले लिया। मैंने बहुत रो-धोकर और हाथ-पैर जोड़कर कहा कि बाबूजी, आप हाकिम ठहरे, आपका राज छोड़कर मैं कहाँ जाअूँगा, और कुछ नहीं तो चार मन पुआल ही मुझे दे दो, छप्पर-पर फूसतक नहीं है। खाली अेक कोठरी है। अुसीमें बाप-बेटी दोनों रहते हैं। और कुछ नहीं होगा तो ताड़के पत्तोंसे ही अुसे छाकर यह बरसात किसी तरह बिता दूँगा। लेकिन खानेको कुछ न मिलेगा तो मेरा महेश मर जायगा।"

तर्करत्नने हँसते हुअे कहा—"वाह! बड़े शौकसे अिसका नाम रखा गया है महेश! मेरा तो मारे हँसीके दम निकला जाता है।"

लेकिन यह हँसी गफूरके कानोंमें नहीं पहुँची। वह कहने लगा—"लेकिन मालिककी मुझपर दया नहीं हुअी।

अुन्होंने सिर्फ दो महीने खाने-भरको धान मुझे दिया और बाकी सब अपनी खत्तीमें भरवा लिया। हम लोगोंको अुसमें अेक तिनका भी नहीं मिला।"

अितना कहते-कहते गफूरका कंठ-स्वर आँसुओंके भारसे भारी हो गया; लेकिन तर्करत्नके मनमें अितनेपर भी करुणाका अुदय नहीं हुआ। अुन्होंने कहा—"तुम भी खूब मजेके आदमी हो। अुनका खाकर बैठे हो, दोगे नहीं। जमींदार क्या तुम्हें अपने घरसे खिलायेंगे? तुम लोग तो राम-राज्यमें रहते हो। नीच जाति हो कि नहीं, अिसीलिये अुनकी निन्दा करनेमें ही मरे जाते हो।"

गफूरने लज्जित होकर कहा—"महाराज, भला मैं अुनकी निन्दा क्यों करने लगा! हम लोग अुनकी निन्दा तो नहीं करते, लेकिन आप ही बतलाअिये कि मैं दूँ कहाँ से। कोअी चार बीघे ज़मीन है। अुसी सीरमें खेती करता हूँ। लेकिन अिधर लगातार दो बरससे कुछ भी पैदावार नहीं हुअी। खेतका धान खेतमें ही सूख गया। यहाँ बाप-बेटीको दोनो समय पेट भर खानेतकको नहीं मिलता। ज़रा घरकी तरफ देखिये। पानी-बूँदीमें लड़कीको लेकर अेक कोनेमें बैठा-बैठा रात बिता देता हूँ। पैर फैलाकर सोनेतककी जगह नहीं मिलती। ज़रा अिस महेशको ही देखिये। अिसकी हड्डी-पसलियाँतक गिनी जा सकती हैं। महाराज, आप ही दो मन धान अुधार दे दीजिये। ज़रा गोरूको भी दो-चार दिन भर-पेट खिलाअूँ।"

अितना कहता हुआ गफूर झटसे हाथ जोड़कर ब्राह्मणके पैरोंके पास बैठ गया। तर्करत्न तीरकी तरह दो कदम पीछे खिसक गये और बोले—'मर कम्बख्त, क्या मुझे छू ही लेगा?"

गफ़ूर—“नहीं महाराज, मैं छूने क्यों लगा ? छुऊँगा नहीं। लेकिन अिस समय मुझे दो मन धान दे दो। अुस दिन मैं आपके यहाँ चार-चार राशियाँ देख आया हूँ। मुझे मन-दो-मन देनेसे आपको कुछ पता भी न चलेगा कि किसीको कुछ दिया है। अगर हम लोग भूखों भी मर जायँ, तो कोअी हर्ज नहीं। लेकिन यह बेचारा बे-ज़बान जानवर है। मुँहसे कुछ कह भी नहीं सकता, चुपचाप खड़ा खड़ा देखता रहता है और अिसकी आँखोंसे पानी गिरता है।”

तर्करत्नने कहा—“तुम अुधार माँगते हो न ? लेकिन यह तो बतलाओ कि यह अुधार चुकाओगे कैसे ?”

गफ़ूर आशान्वित होकर व्यग्र स्वरसे कहने लगा—“महाराज, जिस तरहसे होगा, मैं चुका दूँगा। आपके साथ धोखेबाजी नहीं करूँगा।”

तर्करत्नने मुखसे अेक प्रकारका शब्द करके गफ़ूरके व्याकुल स्वरका अनुकरण करते हुअे और मानो अुसका मुँह चिढ़ाते हुअे कहा—“धोखेबाजी नहीं करूँगा। जिस तरहसे होगा चुका दूँगा ! तुम बड़े चालाक हो। चल हट, रास्ता छोड़। मैं घर जाऊँ; दिन ढलने लगा है।”

अितना कहकर तर्करत्न मुँह बिचकाकर मुस्कराते हुअे आगे बढ़े; लेकिन तुरन्त ही डरकर पीछे हटे और बिगड़कर बोले—“कम्बख्त कहींका ! यह तो सींग हिलाता हुआ आगे बढ़ रहा है। कहीं मारेगा तो नहीं ?”

गफ़ूर अुठकर खड़ा हो गया। ब्राह्मणके हाथमें फल-फूल और भीगे चावलोंकी पोटली थी। वही पोटली बैलको दिखलाते हुअे अुन्होंने कहा—“अिसीकी महँक लगी है। अिसीमेंसे मुट्ठी भर खाना चाहता है। खाना चाहता है ? हो सकता है। जैसा खेतिहर है, वैसा ही अुसका बैल भी ठहरा। भूसातक

तो खानेको नहीं मिलता और खाना चाहता है चावल और केला। चलो, अिसे रास्तेमेंसे हटाकर बाँधो। अिसके अैसे सींग हैं कि मालूम होता है कि किसी दिन किसीका खून कर डालेगा।”

अितना कहते हुअे तर्करत्न महाशय कुछ कतराकर वहाँसे जल्दी जल्दी पैर बढ़ाते हुअे चले गये।

गफूर अुस ओरसे दृष्टि हटाकर कुछ देरतक चुपचाप महेशके मुखकी ओर देखता रहा। अुसके घने गहरे काले दोनों नेत्र वेदना और क्षुधासे भरे हुअे थे। गफूरने अुससे कहा— “तुम्हें अुन्होंने अेक मुठ्ठी भी न दिया। अुनके पास है तो बहुत-सा; लेकिन फिर भी वह किसीको नहीं देते, जाने दो, न दें।”

अितना कहते-कहते गफूरका गला भर आया और अिसके बाद अुसकी आँखोंसे टपटप आँसू बहने लगे। अुसने महेशके और भी पास पहुँचकर अुसके गले, सिर और पीठपर हाथ फेरते हुअे धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया, “महेश, तुम मेरे बेटे हो। तुम आठ बरस तक हम लोगोंका प्रतिपालन करके बुड्ढे हुअे हो। लेकिन फिर भी मैं तुम्हें पेट-भर खानेको नहीं दे सकता। लेकिन तुम यह जानते ही हो कि मैं तुम्हें कितना अधिक चाहता हूँ!”

अिसके अुत्तरमें महेश केवल अपनी गरदन आगे बढ़ाकर चुपचाप आँखें बन्द करके खड़ा रहा। गफूरने अपनी आँखोंका जल अुस बैलकी पीठपर गिराकर और तब अुसे पोंछकर फिर अुसी प्रकार अस्फुट स्वरमें कहना आरम्भ किया—“ज़मींदारने तुम्हारे मुँहका कौर छीन लिया। श्मशानके पास गाँवकी जो थोड़ीसी चराअीकी ज़मीन थी, अुसका भी अुन्होंने पैसेके लोभसे बंदोबस्त कर दिया। अब तुम्हीं बताओ कि

अिस अकालके समय मैं तुम्हें किस तरह खिलाकर जीता रखूँ? अगर मैं तुम्हें छोड़ दूँ तो तुम जाकर दूसरोंकी राशिमेंसे खाने लगोगे—लोगोंके केलोंके पेड़पर मुँह मारने लगोगे। अब मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ? अब तुम्हारे शरीरमें बल नहीं है, यहाँ कोअी तुम्हें लेना नहीं चाहता। लोग तुम्हें गौ-हट्टेमें ले जाकर बेच देनेके लिये कहते हैं।"

मन-ही-मन यह बात कहते-कहते अुसकी आँखोंसे फिर टपटप आँसू बहने लगे। अिसके बाद अुसने अपनी टूटी हुअी झोपड़ीके पिछवाड़ेसे थोड़ा-सा पुराना और विवर्ण खर लाकर अुसके मुँहके आगे रख दिया और धीरेसे कहा—"लो भाअिया, जल्दीसे थोड़ा-सा खा लो। देर होनेसे फिर......"

अितनेमें अुसकी लड़कीने पुकारा-"अब्बा!"

"क्या है बेटी?"

"आओ, भात खा लो।"

अितना कहकर अमीना घरसे निकलकर बाहर दरवाजे-पर आ खड़ी हुअी। क्षण ही भरमें अुसने सब देखकर कहा—"क्यों अब्बा, तुमने फिर महेशको छप्परमेंसे निकाल कर रख दिया है?"

गफूरके मनमें पहलेसे ठीक यही भय हो रहा था अुसने कुछ लज्जित होकर कहा—"बेटी, पुराना सड़ा हुआ खर था। वह आप ही गिरा जा रहा था।"

"अब्बा, मैं अन्दरसे सुन रही थी। अभी अभी तो तुमने खींचकर निकाला है।"

"नहीं बेटी, मैंने खींचा नहीं, बल्कि..."

"लेकिन अब्बा, दीवार जो गिर जायगी।"

गफ़ूर चुप रह गया। यह बात स्वयं अुससे बढ़कर और कौन जानता था कि अेक अिस छोटे-से घरको छोड़कर और सब कुछ चला गया है और अिस तरह करनेसे अगली बरसातमें यह भी न रह जायगा। फिर अिस तरह करनेसे भी आखिर कितनेदिन तक काम चल सकता था!

लड़कीने कहा—"अब्बा, हाथ धोकर आओ और भात खा लो। मैं परोसे देती हूँ।"

गफ़ूर ने कहा—"बेटी, जरा माँड़ मुझे दे दो, पहले अिसे पिला दूँ तो चलूँ।"

"अब्बा, माँड़ तो आज नहीं है। वह तो हाँड़ीमें ही सूख गया।'

"माँड़ भी नहीं है?" गफ़ूर चुप हो रहा। यह बात अुस दस बरसकी लड़कीकी समझमें भी आ गयी थी कि विपत्तिके दिनोंमें ज़रा-सी चीज़ भी नष्ट नहीं की जानी चाहिये। वह हाथ धोकर कोठरीके अन्दर जा खड़ा हुआ। पीतलकी अेक थालीमें पिताके लिये शाकान्न सजाकर कन्याने स्वयं अपने लिये मिट्टीकी अेक सनहकीमें थोड़ा-सा भात परोस लिया था। कुछ देरतक देखनेके बाद गफ़ूरने धीरे-धीरे कहा—"बेटी अमीना, मुझे फिर जाड़ा मालूम हो रहा है। बुखारकी हालतमें खाना क्या अच्छा होगा?"

अमीनाने अुद्विग्न होकर कहा—"लेकिन अुस वक्त तो तुमने कहा था कि बहुत भूख लगी है।"

"अुस वक्त? अुस वक्त बेटी, शायद बुखार नहीं था।"

"अच्छा, तो फिर अुठाकर रख देती हूँ। शामको खा लेना।"

गफ़ूरने सिर हिलाकर कहा—"लेकिन बेटी अमीना, बासी भात खानेसे तो बीमारी और बढ़ जायेगी।"

अमीनाने पूछा—"तो फिर?"

गफूरने न-मालूम क्या सोचकर सहसा अिस समस्याकी अेक मीमांसा कर डाली। अुसने कहा—"बेटी, अेक काम करो। न हो तो यह भात जाकर महेशके ही आगे रख आओ। क्यों अमीना, रातको मुझे अेक मुट्ठी भात न पका दोगी?"

अुत्तरमें अमीनाने सिर अुठाकर कुछ देरतक चुपचाप पिताके मुँहकी ओर देखा और तब सिर झुकाकर धीरे-धीरे गरदन हिलाकर कहा—"हाँ, अच्छा, पका दूँगी।"

गफूरका चेहरा तमक अुठा। पिता और कन्याके बीचमें जो यह छलनका थोड़ा-सा अभिनय हो गया था, अुसे अिन दोनोंके सिवाय शायद अेक और कोअी अन्तरिक्षसे देख रहा था।

२

अिसके पांच-सात दिन बाद बीमार गफूर अेक रोज चिन्तित भावसे दरवाजेपर बैठा हुआ था। अुसका महेश कलसे अभीतक लौटकर घर नहीं आया था। स्वयं अुसके शरीरमें तो शक्ति थी ही नहीं, अिसलिये सवेरेसे अमीना ही अुसे चारों तरफ ढूँढ़ती फिरती थी। दोपहरके बाद वह लौट आयी और बोली—"अब्बा, सुनते हो, माणिक घोषने महेशको थानेमें भेज दिया है।"

गफूरने कहा—"दुत् पगली!"

"नहीं अब्बा, मैं ठीक कहती हूँ। अुनके नौकरने कहा कि अपने अब्बासे जाकर कह दो कि दरियापुरके कांजीहौसमें जाकर ढूँढ़ें।"

"अुसने क्या किया था?"

"अुनके बाग़में घुसकर अुसने वहाँके पेड़-पौधे खराब कर डाले थे।"

गफूर स्तब्ध होकर बैठा रहा। अुसने तबतक मन ही-मन महेशके सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी दुर्घटनाओंकी कल्पना की थी; लेकिन यह आशंका अुसे नहीं हुअी थी। वह जैसा निरीह था, वैसा ही ग़रीब भी था; अिसीलिये अुसे अिस बातका भी भय हुआ था कि अुसका कोअी पड़ोसी अुसे अितना बड़ा दंड भी दे सकता है, और विशेषतः माणिक घोष! अिस प्रान्तमें तो वह अपनी गो-ब्राह्मण-भक्तिके लिये प्रसिद्ध था।

लड़कीने कहा—"अब्बा, दिन ढल रहा है। तुम महेशको लानेके लिये नहीं जाओगे?"

गफूरने कहा—"नहीं।"

"लेकिन अुन लोगोंने तो कहा था कि अगर तीन दिनतक कोअी अुसे लेने नहीं जायगा तो पुलिसवाले अुसे गौ-हट्टेमें बेच डालेंगे।"

गफूरने कहा—"बेच डालें।"

अमीना यह तो नहीं जानती थी कि गौ-हट्टा असल में क्या चीज़ है; लेकिन वह अनेक बार अवश्य देख चुकी थी कि जब कभी महेशके बारेमें गौ-हट्टेका जिक्र आता था, तो अुसका पिता बहुत अधिक विचलित हो जाता था; लेकिन आज गौ-हट्टेका नाम सुनकर भी अुसका पिता चुपचाप वहाँसे अन्दर चला गया था।

जब रात हो गयी और चारों तरफ अँधेरा छा गया, तब गफूर चोरीसे बंशीकी दूकानपर पहुँचा और अुससे कहने लगा—"चाचा, तुम्हें अेक रुपया देना होगा।"

यह कहकर गफूरने अपनी पीतलकी थाली बंशीके बैठनेकी मचियाके नीचे रख दी। अुस थालीकी तौल वगैरह बंशी बहुत अच्छी तरह जानता था। अिधर दो वरसोंके

बीचमें अुसने थाली अपने पास रेयन रखकर कोअी पाँच चार अुसे अेक अेक रुपया अुधार दिया था। अिसीलिये आज भी अुसने कोअी आपत्ति नहीं की।

दूसरे दिन महेश फिर अपनी जगहपर दिखाअी देने लगा। वही बबूलका पेड़, वही पगहा, वही खूँटा, वही तृणहीन शून्य आधार और वही क्षुधातुर काले नेत्रोंकी सजल अुत्सुक दृष्टि। अेक बुड्ढा मुसलमान बहुत ही तीव्र दृष्टिसे अुसका निरीक्षण कर रहा था। पास ही अेक तरफ दोनों घुटने सटाकर गफ़ूर चुपचाप बैठा हुआ था। भली भाँति परीक्षा कर चुकनेके बाद अुस बुड्ढे मुसलमानने अपनी चादरके पल्लेमेंसे दस रुपयेका अेक नोट निकाला और अुसकी तह खोलकर और कअी बार अुसे मसलकर अन्तमें गफ़ूरके पास पहुँचकर कहा—“ अब मैं अिसे भुनाने नहीं जाअूँगा। लो, पूरा-पूरा ले लो। ”

गफ़ूरने हाथ बढ़ाकर वह नोट ले लिया और चुपचाप ज्यों-का त्यों वहीं बैठा रहा। अुस बुड्ढेके साथ जो और दो आदमी आये थे, वे ज्योंही बैलका पगहा खोलनेका अुद्योग करने लगे, त्योंही वह अचानक अुठकर सीधा खड़ा हो गया और अुद्धत स्वरसे बोल अुठा—“ खबरदार! कहे देता हूँ, पगहेमें हाथ मत लगाना; नहीं तो अच्छा न होगा। ”

वे लोग भी चौंक पड़े। बुड्ढेने चकित होकर पूछा—“ क्यों ? ”

गफ़ूरने फिर अुसी प्रकार बिगड़कर जवाब दिया—“क्यों, और क्या! मेरी चीज़ है, मैं नहीं बेचूँगा। मेरी खुशी। ”

यह कहकर गफ़ूरने नोट दूर फेंक दिया।

अुन लोगोंने कहा—“ कल तो रास्तेमें तुम बयाना ले आये थे। ”

"यह लो, अपना बयाना वापस लो।"

यह कहकर गफ़ूरने कमरमेंसे दो रुपये निकालकर झल-से दूर फेंक दिये। जब अुस बुड्ढेने देखा कि अेक झगड़ा होना चाहता है, तब अुसने हँसते हुअे धीर-भावसे कहा—"अिस तरह चाँप चढ़ाकर दो रुपये और ले लेंगे। बस यही न? दे दो जी, लड़कीके हाथमें मिठाअी खानेके लिये दो रुपये और दे दो। क्यों यही न?"

"नहीं।"

"लेकिन यह भी जानते हो कि अिससे ज्यादा अेक अधेला भी कोअी न देगा?"

गफ़ूरने खूब ज़ोरसे सिर हिलाकर कहा—"नहीं!"

बुड्ढेने कुछ नाराज़ होकर कहा—"और नहीं तो क्या! अिसके चमड़ेका ही जो कुछ दाम वसूल होगा, वह होगा। और नहीं तो, और माल है ही क्या?"

"तोबा! तोबा!" गफ़ूरके मुँहसे सहसा अेक गन्दी बात निकल गयी। वह तुरन्त ही दौड़कर अपने घरके अन्दर जा छिपा और वहींसे चिल्लाकर अुन लोगोंको डराने लगा कि अगर तुम लोग तुरन्त ही अिस गाँवसे चले नहीं जाओगे तो मैं अभी ज़मींदारको बुलवा भेजूँगा और तुम लोगोंको जूतेसे पिटवाकर छोडूँगा।

यह बखेड़ा देखकर वे सब लोग चले गये। लेकिन कुछ ही देर बाद ज़मींदारकी कचहरीमें अुसकी बुलाहट हुअी। गफ़ूरने समझ लिया कि यह बात मालिकके कानोंतक पहुँच गयी।

ज़मींदारकी कचहरीमें अच्छे-बुरे सभी तरहके बहुत-से लोग बैठे हुअे थे। शिब्बू बाबूने लाल-लाल आँखें करके

कहा—"क्यों बे, गफूर, मेरी तो समझमें ही नहीं आता कि आज मैं तुझे क्या सजा दूँ? तू जानता है कि तू कहाँ रहता है?"

गफूरने हाथ ज़ोड़कर कहा—"जी हाँ, जानता हूँ हम लोगोंको तो भर-पेट खानेको भी नहीं मिलता। और नहीं तो आज आप मुझे जो कुछ जुरमाना करते, वह दे देता और कभी 'नहीं' न करता।

सभी लोग बहुत विस्मित हुअे। सब लोग यही समझते थे कि गफूर बहुत ही जिद्दी और बहुत बड़ा बद-मिजाज है। अुसे रुलाअी आने लगी और अुसने कहा—"सरकार, अब मैं अैसा काम कभी न करूँगा।"

अितना कहकर गफूरने स्वयं ही अपने हाथोंसे अपने दोनों कान पकड़े और आँगनके अेक सिरेसे दूसरे सिरेतक नाक रगड़ता हुआ चला गया और तब फिर अुठकर खड़ा हो गया।

शिब्बू बाबूने सदय स्वरसे कहा—"अच्छा जा, जा। हो गया। देख, अब कभी अिस तरहकी बात भी ख़यालमें मत लाना।"

यह हाल सुनकर सभी लोग मारे आनन्दके पुलकित हो गये। किसीके मनमें अिस बातका तनिक भी सन्देह न रह गया कि यह महापातक केवल ज़मींदारके पुण्य-प्रभाव और शासन-भयसे ही निवारित हुआ है। तर्करत्न महाशय भी वहाँ अुपस्थित थे। अुन्होंने 'गो' शब्द की शास्त्रिय व्याख्या कर सुनायी और जिस अुद्देश्यसे अिस धर्म-ज्ञान-हीन म्लेच्छ जातिके लिये गाँवकी सीमाके अन्दर बसानेका निषेध किया गया है, वह अुद्देश भी सब लोगोंको बतला दिया; और अिस प्रकार अुन्होंने मानो सब लोगोंके ज्ञान-नेत्र विकसित कर दिये।

गफूरने किसीकी अेक बातका भी कोअी अुत्तर नहीं दिया। अुसने समझ लिये कि यहाँ मेरा जितना अपमान और तिरस्कार हुआ है, वस्तुतः मैं अुसका पात्र था और वह मेरा प्राप्य था; और अिसीलिये वह सारा अपमान और सारा तिरस्कार शिरोधार्य करके प्रसन्न-चित्त होकर घर लौट आया। अुसने अपने पड़ोसियोंके यहाँसे माँड़ माँगकर महेशको पिलाया और वह अुसके शरीर, मस्तक तथा सींगोंपर बार-बार हाथ फेरकर अस्फुट स्वरमें न-जाने कितनी ही बातें कहने लगा।

२

ज्येष्ठ मास समाप्तिपर आ रहा था। आजके आकाशकी तरफ बिना देखे ही अिस बातका पता लग सकता था कि धूपकी जिस मूर्तिने अेक दिन वैशाखके अन्तमें आत्मप्रकाश किया था, वह कितनी अधिक भीषण और कितनी अधिक कठोर हो सकती है। करुणाका कहीं आभासतक नहीं दिखाअी देता। आज मानो यह बात सोचते हुअे भी डर लगता था कि कभी अिस रूपमें लेश-मात्र भी परिवर्तन हो सकता है और किसी दिन यह आकाश मेघके कारण स्निग्ध और सजल भी दिखाअी दे सकता है। अैसा जान पड़ता था कि जो अग्नि समस्त नभःस्थलमें व्याप्त होकर धधक रही है, अुसका कहीं अन्त और कहीं समाप्ति नहीं है, और अन्तमें जबतक सब कुछ दग्ध न हो जायगा, तबतक अिस आगका धधकना बन्द न होगा।

अैसे ही अेक दिन दोपहरके समय गफूर लौटकर अपने घर आया। दूसरेके दरवाजेपर जाकर मेहनत-मज़दूरी करनेकी अुसकी आदत नहीं थी, और तिसपर अभी चार ही पाँच दिन पहले अुसे बुखारने छोड़ा था। अुसका शरीर जितना ही दुर्बल था, अुतना ही श्रान्त भी था, तो भी वह आज काम ढूँढ़नेके

लिये ही घरसे निकला था। किन्तु केवल यह प्रचंड धूप ही अुसके सिरपर जाकर पड़ी थी, अिसके सिवा और कोअी फल नहीं हुआ था। मारे भूख, प्यास और थकावटके अुसकी आँखोंके आगे अँधेरा छा रहा था। आँगनमें खड़े होकर अुसने पुकारा—"अमीना, भात बन गया?"

लड़की अन्दरसे निकलकर बाहर आअी और बिना कोअी अुत्तर दिये चुपचाप खड़ी हो गयी।

कोअी अुत्तर न पाकर गफूरने फिर चिल्लाकर पूछा—"अरे भात बना है! क्या कहा? नहीं बना? क्यों नहीं बना?"

"अब्बा, घरमें चावल नहीं है।"

"चावल नहीं है? तो फिर सबेरे मुझसे क्यों नहीं कहा?"

"मैंने तो रातको ही तुमसे कह दिया था।"

गफूरने अुसका मुहँ चिढ़ाते हुअे और अुसके कंठस्वरका अनुकरण करते हुअे कहा—"रातको ही कह दिया था! रातकी कही हुअी बात किसीको याद रहती है!"

स्वयं अुसके कर्कश कंठके कारण अुसका क्रोध और भी दूना हो गया था। अुसने अपना मुँह और भी अधिक बिगाड़कर कहा—"चावल बचेगा कहाँसे? बीमार बुड्ढा बाप चाहे खाय और चाहे न खाय; लेकिन जवान लड़कीको तो चार-चार, पाँच-पाँच बार भात खानेको चाहिये! अब आगेसे मैं चावल तालेमें बन्द करके रखा करूँगा। लाओ अेक लोटा पानी दो। प्यासके मारे कलेजा फटा जा रहा है। कह दो, वह भी नहीं है।"

अमीना अब भी पहलेकी तरह चुपचाप सिर झुकाये खड़ी रही। थोड़ी देरतक प्रतीकषा करनेके बाद जब

गफूरने समझ लिया कि घरमें प्यास बुझानेके लिये पानी भी नहीं है, तब वह अपने आपको रोक न सका। अुसने जल्दीसे आगे बढ़कर और अमीनाके गालपर तड़से अेक थप्पड़ जड़कर कहा—"मुँहजली, हरामजादी, दिनभर तू क्या करती है? दुनियामें अितने आदमी मरते हैं; लेकिन तुझे मौत नहीं आती!"

लड़कीने कुछ भी अुत्तर नहीं दिया। वह मिट्टीका खाली घड़ा अुठाकर अपनी आँखें पोंछती हुअी अुसी तेज़ धूपमें निकल पड़ी, लेकिन अुन आँखोंकी ओटसे ही मानो अेक तीर आकर गफूरके कलेजेमें लगा। अुसकी माँके मर-जानेपर अिस लड़कीको जिस तरह अुसने पाल-पोसकर बड़ा किया था, अुसका हाल सिर्फ वही जानता था। अुस समय अुसे ध्यान हुआ कि मेरी अिस स्नेहशीला कर्मपरायण और शान्त कन्याका कुछ भी दोष नहीं है। खेतमेंसे जो थोड़ा-सा अन्न आया था, वह जबसे समाप्त हो गया है, तबसे हम लोगोंको दोनों समय भर-पेट अन्न ही नहीं मिलता। किसी दिन अेक बार भोजन होता है और किसी दिन यह भी नहीं। दिनमें पाँच-छः बार जिस प्रकार भात खाना असम्भव है अुसी प्रकार मिथ्या भी है। और प्यास बुझानेके लिये जल न होनेके कारण भी अुसे अविदित नहीं था। गाँवमें जो दो-तीन ताल थे, वे सब अेकदमसे सूख गये थे। शिवचरण बाबूके मकानके पास जो ताल था, अुसका पानी सब लोगोंको नहीं मिल सकता था। अन्यान्य जलाशयोंके बीचमें जो दो अेक गड्ढे खोदकर थोड़ा-बहुत जल संचित किया जाता था, अुसके लिये जितनी ही छीना-झपटी होती थी, अुतनी ही अुसके पास भीड़ भी होती थी। और विशेषतः मुसलमान होनेके कारण तो यह लड़की अुन गड्ढोंके पास भी नहीं पहुँच सकती थी। घंटों दूर खड़े रहनेपर और

लोगोंसे बहुत-कुछ अनुनय- विनय - करनेपर जब कोअी दया करके अुसके बरतनमें थोड़ा-सा जल डाल देता था, तब वहीं जल लेकर वह घर लौट आया करती थी। ये सभी बाते गफूर जानता था। हो सकता है कि आज वहाँ जल रहा ही न हो, या अपनी छीना-झपटीमें किसीको अुस लड़कीपर दया करनेका अवसर ही न मिला हो। गफूरने समझ लिया कि अवश्य ही आज किसी तरहकी कोअी बात हुअी होगी। यही बात ध्यानमें आनेके कारण अुसकी आँखोंमें भी जल भर आया। ठीक अिसी समय ज़मींदारका प्यादा यमदूतकी तरह आकर आँगनमें खड़ा हो गया और चिल्लाकर पुकारने लगा—"अे गफूर, घरमें हो?"

गफूरने कुछ तिक्त स्वरसे अुत्तर दिया—"हाँ, क्या है?"

"बाबूजी बुलाते हैं, चलो।'

गफरने कहा—"अभी मैंने कुछ खाया-पिया नहीं है; थोड़ी दरमे आअूँगा।"

गफूरकी अितनी बड़ी गुस्ताखी प्यादा बरदाश्त न कर सका। अुसने अेक कुत्सित सम्बोधन करके कहा—"बाबूजी का हुकुम है कि जूते मारते हुअे घसीटकर ले आओ।"

गफूर फिर दोबारा आत्म-अिस्मृत हुआ। अुसने भी कुछ दुर्वाक्यका अुच्चारण करके कहा—"मलकाके राज्यमें कोआ किसीका गुलाम नहीं है। मैं लगान देकर यहाँ बसता हूँ। मैं नहीं आअूँगा।"

लेकिन संसारमें अैसे क्षुद्र व्यक्तिकी अितनी बड़ी दुहाअी देना केवल अनुचित ही नहीं होता, बल्कि विपत्तिका भी कारण होता है। खैरियत यही थी कि अितना क्षीण स्वर अुतने बड़े कानोंतक जाकर पहुँचा नहीं था; नहीं तो अुसके

मुँहके अन्न और आँखोंकी नींदका कहीं ठिकाना ही न रह जाता। अिसके बाद जो कुछ हुआ, वह विस्तारपूर्वक बतलानेकी आवश्यकता नहीं। लेकिन अिसके कोअी घण्टेभर बाद जब वह ज़मींदारकी कचहरीसे लौटकर घर आया था, तब अुसका मुँह और आँखें सूजी हुअी थीं। अुसके अितने बड़े दंडका कारण मुख्यतः महेश था, सबेरे गफ़ूर जब घरसे चला गया था, तब महेश भी पगहा तुड़ाकर बाहर निकल पड़ा था, और ज़मींदारके आँगनमें घुसकर अुसने वहाँके फूलोंके कअी पौधे खा डाले थे और जो धान वहाँ सूख रहा था, अुसे तितर-वितर और नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। और अन्तमें जब लोगोंने अुसे पकड़ना चाहा था, तब वह बाबू साहबकी छोटी लड़की को ज़मीनपर पटककर भाग आया था।

अिस प्रकारकी यह कोअी पहली घटना नहीं थी। अिससे पहले भी कअी बार अैसी ही घटनाअें हो चुकी थीं। लेकिन पहले अुसे सिर्फ़ ग़रीब समझकर माफ़ कर दिया गया था। अगर वह अिस बार भी पहलेकी ही तरह आकर हाथ-पैर जोड़ता तो अुसे माफ़ कर दिया जाता; लेकिन अुसने जो प्यादेसे यह कह दिया था कि मैं लगान देकर बसता हूँ और किसीका ग़ुलाम नहीं हूँ, वही अुसकी दुर्दशाका कारण हुआ था। प्रजाके मुँहसे अितनी बड़ी गुस्ताखीकी बात सुनकर शिवचरण बाबू किसी तरह बरदाश्त न कर सके थे। वहाँके प्रहार और लांछनोंका गफ़ूरने कुछ भी प्रतिवाद नहीं किया था और अपना मुँह बन्द किये था। घर आकर भी वह अुसी तरह चुपचाप पड़ गया। भूख और प्यासका तो अुसे कुछ भी ध्यान नहीं रह गया था; लेकिन अुसका अन्तःकरण बाहरके दोपहरके आकाशकी ही तरह जल रहा था। कितना समय बीत गया; लेकिन जब आँगनमेंसे अचानक अुसे अपनी कन्याका आर्त स्वर सुनाअी पड़ा, तब वह जल्दीसे अुठकर

खड़ा हो गया और दौड़ा हुआ बाहर निकल आया। वहाँ आकर अुसने देखा कि अमीना ज़मीनपर गिरी हुअी है। अुसका घड़ा फूट गया है और अुसमेंका जल अिधर-उधर वह रहा है और महेश ज़मीनपर मुँह लगाकर वह जल पी रहा है। पलक भी झपकने नहीं पायी थी कि गफ़ूर आपेसे बाहर हो गया। मरम्मत करनेके लिये कल ही अुसने अपने हलकी मुठिया निकाली थी। वही मुठिया अुसने दोनों हाथोंसे पकड़कर महेशके अवनत मस्तकपर ज़ोरसे आघात किया।

महेशने सिर्फ़ अेक ही बार सिर अूपर अुठानेकी चेष्टा की और अिसके बाद अुसका अनाहारसे क्लिष्ट और जीर्ण-शीर्ण शरीर ज़मीनपर लोटने लगा। अुसकी आँखोंके कोनोंसे आँसुओंकी कुछ बूँदें भी अुसके कानोंपरसे वह निकलीं, और अुसके सिरके खूनकी भी कुछ बूँदें निकलीं। दो बार अुसका सारा शरीर थरथर करके काँप अुठा और अिसके बाद अगले और पिछले पैर जितनी दूरतक फैल सकते थे, अुतनी दूरतक अुन्हें पसारकर महेशने अन्तिम निःश्वासका त्याग किया।

अमीनाने रोते हुअे कहा—"अरे अब्बा, यह तुमने क्या किया? हमारा महेश तो मर गया!"

गफ़ूर न तो अपनी जगहसे हिला और न अुसने कोअी अुत्तर ही दिया। वह अपने निर्निमेष नेत्रोंसे अेक जोड़े निमेष-हीन और गम्भीर काले नेत्रोंकी ओर देखता हुआ पत्थरकी भाँति निश्चल खड़ा रहा।

यह समाचार पाकर कोअी दो घण्टेके अन्दर ही दूसरे गाँवसे चमारोंका अेक दल वहाँ आकर अेकत्र हो गया और वे लोग महेशको बाँसमें बाँधकर वहाँसे अुठा ले गये। अुनके हाथोंमें धारदार चमचमाते हुअे छुरे देखकर गफ़ूर सिहर अुठा और अुसने आँखें मूँद लीं; लेकिन मुँहसे अुसने अेक बात भी नहीं कही।

गाँवके लोगोंने कहा कि तर्करत्नसे व्यवस्था माँगनेके लिये ज़मींदारने अपना आदमी भेजा है। कहीं अैसा न हो कि प्रायश्चित्तका खर्च जुटानेके लिये तुम्हें अपना घर-बार तक बेचना पड़े।

लेकिन गफूरने अिन सब बातोंका कोअी अुत्तर नहीं दिया। वह अपने दोनों घुटनोंके अुपर सिर रखकर जहाँ-का-तहाँ बैठा रहा।

बहुत रात बीत जानेपर गफूरने अपनी लड़की अमीनाको जगाकर कहा—"अमीना, हम लोग चलें।"

वह दरवाजेके पास सोयी हुयी थी। आँखें मलती हुअी वह अुठकर बैठ गयी और बोली—"कहाँ चलोगे, अब्बा?"

गफूरने कहा—"फूलबेड़ाके जूटके कारखानेमें काम करनेके लिये।"

लड़की चकित होकर देखती रह गयी। अिससे पहले बहुत कुछ दुःख पड़नेपर भी अुसका पिता कभी कारखानेमें काम करनेके लिये तैयार नहीं होता था। वह कहा करता था कि वहाँ धर्म-अीमान कुछ भी नहीं रह जाता, औरतोंकी अिज़्ज़त-आबरू नहीं रह जाती। अुसके मुँहसे अिसी तरहकी बातें वह कअी बार सुन चुकी थी।

गफूरने कहा—"जल्दी चलो बेटी, देर मत करो। अभी बहुत दूर जाना है।"

अमीना पानी पीनेका बँधना और पिताके भात खानेकी पीतलकी थाली साथ ले चलना चाहती थी; लेकिन गफूरने अुसे मना किया और कहा—"बेटी, ये सब चीज़ें यहीं रहने दो। अिनसे हमारे महेशका प्रायश्चित्त होगा।"

अन्धकारपूर्ण गम्भीर निशामें अपनी लड़कीका हाथ पकड़कर गफ़ूर घरसे बाहर निकला। अिस गाँवमें अुसका कोअी आत्मीय नहीं रहता था, अिसलिये अुसे किसीसे कुछ कहने-सुननेकी भी कोअी ज़रूरत नहीं थी। आँगनसे निकलकर और बाहर रास्तेके पास अुसी बबूलके पेड़के नीचे पहुँचकर वह रुक गया और ज़ोर-ज़ोरसे रोने लगा। नक्षत्र-खचित कृष्ण आकाशकी ओर सिर अुठाकर अुसने कहा—'या अल्लाह! मुझे तू जो चाहे सजा देना; लेकिन मेरा महेश प्यासा ही मर गया है। अुसके चरनेके लिये किसीने ज़रा-सी भी ज़मीन नहीं छोड़ी थी। जिसने तुम्हारी दी हुअी मैदानकी घास अुसे नहीं खाने दी, और तुम्हारा दिया हुआ पानीतक अुसे नहीं पीने दिया, अुसका क़सूर तुम कभी माफ़ न करना।

काकी

अुस दिन बड़े सबेरे जब श्यामूकी नींद खुली तब अुसने देखा, घर-भरमें कुहराम मचा हुआ है। अुसकी काकी-अुमा-अेक कम्बलपर नीचेसे अूपरतक कपड़ा ओढ़े हुअे भूमि-शयन कर रही है और घरके सब लोग अुसे घेरकर बड़े करुण-स्वरमें विलाप कर रहे हैं।

लोग जब अुमाको श्मशान ले जानेके लिये अुठाने लगे तब श्यामूने बड़ा अुपद्रव मचाया। लोगोंके हाथोंसे छूटकर वह अुमाके अूपर जा गिरा और बोला—"काकी तो सो रही हैं। अुन्हें अिस तरह अुठाकर कहाँ लिये जा रहे हो? मैं न ले जाने दूँगा।"

लोगोंने बड़ी कठिनतासे अुसे हटा पाया। काकीके अग्नि-संस्कारमें भी वह न जा सका। अेक दासी राम-राम करके अुसे घरपर ही सँभाले रही।

यद्यपि बुद्धिमान् गुरुजनोंने अुसे विश्वास दिलाया कि अुसकी काकी अुसके मामाके यहाँ गयी है, परंन्तु असत्यके आव-रणमें सत्य बहुत समयतक छिपा न रह सका। आसपासके अन्य अबोध बालकोंके मुँहसे ही वह प्रकट हो गया। यह बात अुससे छिपी न रह सकी। [illegible] आर कहीं नहीं, अूपर रामके यहाँ गयी है। काकीके लिये कअी दिनतक लगातार रोते रोते अुसका रुदन तो क्रमशः शान्त हो गया, परन्तु शोक शान्त न हो सका। जिस तरह वर्षाके अनन्तर अेक ही दो दिनमें पृथ्वीके अूपरका पानी अगोचर हो जाता है, परन्तु बहुत भीतर तक अुसकी आर्द्रता बहुत दिनतक बनी रहती है, अुसी प्रकार वह शोक अुसके अन्तस्तलमें जाकर बस गया। वह प्रायः अकेला बैठा बैठा शून्य मनसे आकाशकी ओर ताका करता।

अेक दिन अुसने अूपर अेक पतंग अुडती देखी। न जाने क्या सोचकर अुसका हृदय अेकदम खिल अुठा। विश्वेश्वरके पास जाकर बोला—“ काका, मुझे अेक पतंग मँगा दो। अभी मँगा दो। ”

पत्नीकी मृत्युके बादसे विश्वेश्वर बहुत अन्यमनस्क-से रहते थे। ‘ अच्छा मँगा दूँगा ’ कहकर वे अुदास भावसे बाहर चले गये।

श्यामू पतंगके लिये बहुत अुत्कंठित हो अुठा। वह अपनी अिच्छा किसी तरह न रोक सका। अेक जगह खूँटीपर विश्वेश्वरका कोट टँगा हुआ था। अिधर-अुधर देखकर अुसने अुसके पास अेक स्टूल सरकाकर रक्खा। और अूपर चढ़कर कोटकी जेबें टटोलीं। अुनमेंसे अेक चवन्नीका आविष्कार करके वह तुरन्त वहाँसे भाग गया।

सुखिया दासीका लड़का—भोला—श्यामूका समवयस्क साथी था। श्यामूने अुसे चवन्नी देकर कहा—“ अपनी

जीजीसे कहकर गुपचुप अेक पतंग और डोर मँगा दो। देखो, खूब अकेलेमें लाना; कोअी जान न पाये।"

पतंग आयी। अेक अँधेरे घरमें अुसनें डोर बाँधी जाने-लगी। श्यामूने धीरेसे कहा—"भोला, किसीसे न कहो तो अेक बात कहूँ?"

भोलाने सिर हिलाकर कहा—'नहीं, किसीसे न कहूँगा।' श्यामूने रहस्य खोला। कहा—"मैं यह पतंग अूपर रामके यहाँ भेजूँगा। अिसे पकड़कर काकी नीचे अुतरेंगी। मैं लिखना नहीं जानता, नहीं तो अिसपर अुनका नाम लिख देता।"

भोला श्यामूसे अधिक समझदार था। अुसने कहा—"बात तो बड़ी अच्छी सोची, परन्तु अेक कठिनता है। यह डोर पतली है। अिसे पकड़कर काकी अुतर नहीं सकती। अिसके टूट जानेका डर है। पतंगमें मोटी रस्सी हो तो सब ठीक हो जाय।"

श्यामू गंभीर हो गया। मतलब यह—बात लाख रुपयेकी सुझायी गयी है। परन्तु अेक कठिनता यह थी कि मोटी रस्सी कैसे मँगायी जाय? पासमें दाम हैं नहीं और घरके जो आदमी अुसकी काकीको बिना दया-मायाके जला आये हैं, वे अुसे अिस कामके लिये कुछ देंगे नहीं। अुस दिन श्यामूको चिन्ताके मारे बड़ी राततक नींद नहीं आयी।

पहले दिनकी ही तरकीबसे दूसरे दिन फिर अुसने विश्वेश्वरके कोटसे अेक रुपया निकाला। ले जाकर भोलाको दिया और बोला—"देख भोला, किसीको मालूम न होने पाये। अच्छी-अच्छी दो रस्सियाँ मँगा दे। अेक रस्सी ओछी पड़ेगी। जवाहिर भैयासे मैं अेक कागज़पर 'काकी' लिखवा रक्खूँगा। नामकी चिट रहेगी तो पतंग ठीक अुन्हींके पास पहुँच जायगी।"

दो घंटे बाद प्रफुल्ल मनसे श्यामू और भोला अँधेरी कोठरीमें बैठे-बैठे पतंगमें रस्सी बाँध रहे थे। अकस्मात् शुभ कार्यमें विघ्नकी तरह अुग्र मूर्ति धारण किये हुअे विश्वेश्वर वहाँ आ घुसे। भोला और श्यामू को धमकाकर बोले— "तुमने हमारे कोटसे रुपया निकाला है?"

भोला सकपकाकर अेक ही डाँटमें मुख़बिर बन गया। बोला—"श्यामू भैयाने रस्सी और पतंग मँगानेके लिये निकाला था।"

विश्वेश्वरने श्यामूको दो तमाचे जड़कर कहा— "चोरी सीखकर जेल जायगा! अच्छा, तुझे आज अच्छी तरह समझाता हूँ।" कहकर दो-चार थप्पड़ और जड़कर पतंग फाड़ डाली। अब रस्सियोंकी ओर देखकर अुन्होंने पूछा—"ये किसने मँगायीं?"

भोलाने कहा—"अिन्होंने मँगायी थीं। कहते थे, अिससे पतंग तानकर काकीको रामके यहाँसे नीचे अुतारेंगे।"

विश्वेश्वर अेक क्षणके लिये हतबुद्धि होकर खड़े रह गये। अुन्होंने फटी हुयी पतंग अुठाकर देखी। अुसपर अेक कागज चिपका था, जिसपर लिखा हुआ था,— 'काकी'।

देशभक्त

"स्वामिन्, आज कोअी सुंदर सृष्टि करो। किसी अैसे प्राणीका निर्माण करो जिसकी रचनापर हमें गौरव हो सके। क्यों?"

"सचमुच प्रिये, आज तुम्हें क्या सूझा जो सारा धंधा छोड़कर यहाँ आयी हो, और मेरी सृष्टि-परीक्षा लेनेको तैयार हो?"

"तुम्हारी परीक्षा, और मैं लूँगी? हरे, हरे! मुझे व्यर्थ ही काँटोंमें क्यों घसीट रहे हो नाथ? योंही बैठी बैठी तुम्हारी अद्भुत रचना 'मृत्युलोक' का तमाशा देख रही थी। जब जी ऊब गया तब तुम्हारे पास चली आयी हूँ। अब संसारमें मौलिकता नहीं दिखाओी पड़ती। वही पुरानी गाथा चारों ओर दिखायी-सुनायी पड़ रही है। कोओी रोता है, कोओी खिल-खिलाता है; अेक प्यार करता है दूसरा अत्याचार करता है; राजा धीरे-धीरे भीख माँगने लगता है और भिक्षुक शासन करने। अिन बातोंमें मौलिकता कहाँ? अिसलिये प्रार्थना करती हूँ, कोओी मनोरंजक सृष्टि सँवारो। संसारके अधिकतर प्राणी तुमको शाप ही देते हैं, अेक बार आशीर्वाद भी लो।"

"अच्छी बात है, अिस समय चित्त भी प्रसन्न है। किसीसे मानव सृष्टिकी आवश्यक सामग्रियाँ यहीं मँगवाओ। आज मैं तुम्हारे सामने ही तुम्हारी सहायतासे सृष्टि करूँगा।"

"मैं और तुमको सहायता दूँगी? तब रहने दो, हो चुकी सृष्टि! सृष्टि करनेकी योग्यता यदि मुझमें होती तो तुमको कष्ट देनेके लिये यहाँ आती?"

"नाराज़ क्यों होती हो? तुमसे पुतला तैयार करनेको कौन कहता है? तुम यहाँ चुपचाप बैठी रहो। हाँ, कभी कभी मेरी और मेरी कृतिकी ओर अपने मधुर कटाक्षको फेर दिया करना। तुम्हारी अितनी ही सहायतासे मेरी सृष्टिमें जान आ जायगी, समझी?"

२

क्षिति, जल, अग्नि, आकाश और पवनके संमिश्रणसे विधाताने अेक पुतला तैयार किया। अिसके बाद अुन्होंने सबसे पहले तेजको बुलाकर अुस पुतलेमें प्रवेश करनेको कहा। तेजके बाद सौंदर्य, दया, करुणा, प्रेम, विद्या, बुद्धि, बल,

संतोष, साहस, अुत्साह, धैर्य, गंभीरता आदि समस्त सद्गुणोंसे अुस पुतलेको सजा दिया। अंतमें आयु और भाग्यकी रेखाअें बनानेके लिये ज्योंही विधाताने लेखनी अुठायी, त्योंही ब्रह्माणीने रोका—“सुनिये भी, अिसके भाग्यमें क्या लिखने जा रहे हैं, और आयु कितनी दीजियेगा ?”

“क्यों ? तुमसे अिन बातोंसे मतलब ? तुम्हें तो तमाशा-भर देखना है, वह देख लेना। भौंहें तनने लगीं न ? अच्छा लो, सुन लो। अिसके भाग्यमें लिखी जा रही है, भयंकर दरिद्रता, दुःख, चिन्ता और अिसकी आयु होगी बीस वर्षोंकी।”

“अरे, यह तमाशा कर रहे हैं ? बल, साहस, दया, तेज, सौंदर्य, विद्या, बुद्धि आदि गुणोंके देनेकी बाद दरिद्रता, दुःख, चिन्ता आदिके देनेकी क्या आवश्यकता ? अिस सृष्टिको देखकर लोग आपकी प्रशंसा करेंगे या गालियाँ देंगे ? फिर, केवल बीस वर्षोंकी अवस्था ? अिन्हीं कारणोंसे मृत्यु-लोकके कवि आपकी शिकायत करते हैं। क्या फिर किसीसे ‘नाम चतुरानन पै चूकते चले गये’ लिखवानेका विचार है ?”

विधाताने मुस्कराकर कहा—“अब तो रचना हो गयी। चुपचाप तमाशा-भर देखो। अिसकी आयु अिसी-लिये कम रखी है, जिसमें हमें तमाशा जल्द दिखायी पड़े।”

ब्रह्माणीने पूछा—“अिसे मृत्युलोकवाले किस नामसे पुकारेंगे ?”

प्रजापतिने गर्व-भरे स्वरमें अुत्तर दिया—“देशभक्त !”

अमरावतीसे अिंद्रने, कैलाससे शिवने और वैकुंठसे कमलापतिने, संसार-रंगमंचपर देशभक्तका प्रवेश अुस समय देखा, जब अुसकी अवस्था अुन्नीस वर्षकी हो गयी। अिसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं। देव-मंडलीका अेक अेक दिन हमारी शताब्दीसे भी बड़ा होता है। हमारे अुन्नीस वर्ष तो अुनके कुछ मिनटोंसे भी कम थे।

देशभक्तके दर्शनोंसे भगवान कामारि प्रसन्न होकर नाचने लगे। अुन्होंने अपनी प्राणेश्वरी पार्वतीका ध्यान देशभक्तकी ओर आकर्षित करते हुअे कहा-"देखो, यह सृष्टिकी अभूतपूर्व रचना है। कोअी भी देवता देशभक्तके रूपमें नरलोकमें जाकर अपनको धन्य समझ सकता है। प्रिये, अिसे आशीर्वाद दो।"

प्रसन्नवदना अुमाने कहा— 'देशभक्तकी जय हो।"

अेक दिन देशभक्तके तेजपूर्ण मुख-मंडलपर अचानक कमलाकी दृष्टि पड़ गयी। अुस समय वह (देशभक्त) हाथमें पिस्तौल लिये किसी देशद्रोहीका पीछा कर रहा था। अिंदिराने घबराकर विष्णुको अुसकी ओर आकर्षित करते हुअे कहा—"यह कौन है? मुखपर अितना तेज, अैसी पवित्रता और करने जा रहे हैं, राक्षसी कर्म-हत्या? यह कैसी लीला है, लीलाधर!"

विष्णुने कहा—"चुपचाप देखो,

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

यदि यह देशभक्त राक्षसी काम करने जा रहा है, तो राम, कृष्ण, प्रताप, शिवा, गोविन्द, नेपोलियन, सबने राक्षसी काम किया है। देवी, अिन्हें प्रणाम करो। यह कर्ताकी पवित्र कृति है।"

* * * *

हाथकी पिस्तौल देशद्रोहीके मस्तकके सामने धरकर कहा—"मूर्ख, पश्चात्ताप कर, देशद्रोहसे हाथ खींचकर मातृ-सेवाकी प्रतिज्ञा कर; नहीं तो मरनेके लिये तैयार हो जा।"

देशद्रोहीके मुखपर घृणा और अभिमानकी मुस्कराहट दौड़ गयी। अुसने शासनके स्वरमें अुत्तर दिया—"अज्ञान, सावधान! हम शासकोंके लाड़ले हैं, हमारे माँ-बाप और अीश्वर सर्वशक्तिमान् सम्राट् हैं। सम्राट्के संमुख देशकी बडाअी?"

"अंतिम बार पुनःकह रहा हूं, माताकी जय बोल; अन्यथा अिधर देख !"

देशभक्तकी पिस्तौल गरजनेके लिये तैयार हो गयी। सिरपर संकट देखकर देशद्रोहीने अपनी जेबसे सीटी निकालकर ज़ोरसे बजायी। देशद्रोहीके अनेक रक्षक गुप्त रूपसे अुसके आसपास मौजूद थे। देखते-देखते बीस देशद्रोहियोंका दल देशभक्तकी ओर लपका। फिर क्या था, देशभक्तकी पिस्तौल गरज अुठी। क्षण-भरमें देशद्रोहियोंका सरदार, कबूतरकी तरह पृथ्वीपर लोटने लगा। गिरफ्तार होनेके पूर्व सफल-प्रयत्न देशभक्त आनंदित होकर चिल्ला अुठा-"माताकी जय हो !"

काँपते हुअे अिन्द्रासनने, पुष्पवृष्टि करते हुअे नंदन काननने, तांडव नृत्यमें लीन रुद्रने, कलकल करती हुअी सुरसरिताने अेक स्वरसे कहा "देशभक्तकी जय हो !"

विधाता प्रेम-गद्गद होकर ब्रह्माणीसे बोले-"देखती हो, देशभक्तके चरण-स्पर्शसे अभागा कारागार अपनेको स्वर्ग समझ रहा है। लोहेकी हथकड़ी-बेड़ियोंने मानो पारस पा लिया है, संसारके हृदयमें प्रसन्नताका समुद्र अुमड़ रहा है, वसुंधरा फूली नहीं समाती। यह है मेरी कृति, यह है मेरी विभूति ! प्रिये, गाओ; मंगल मनाओ। आज मेरी लेखनी धन्य हुअी !"

३

जिस दिन देशभक्तकी जीवनीका अंतिम पृष्ठ लिखा जानेवाला था अुस दिन स्वर्गलोकमें आनंदका अपार पारावार अुमड़ रहा था। त्रिंशत् कोटि देवांगनाओंकी थालियोंको अुदार कल्पवृक्षने अपने पुष्पोंसे भर दिया, अमरावतीने अपूर्व शृँगार किया था, चारों ओर मंगल-गान गाये जा रहे थे।

समयसे बहुत पहले ही देवतागण विमानपर आरूढ़ होकर आकाशमें विचरने और देशभक्तके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे।

सम्राट्के समर्थक भीषण शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित होकर अेक बड़े मैदानमें खड़े थे। देशभक्तपर सम्राट्के प्रति विद्रोहका अपराध लगाकर न्यायका नाटक खेला जा चुका था। न्यायाधीशकी यह आज्ञा सुनायी जा चुकी थी कि "या तो देशभक्त अपने कर्मोंके लिये पश्चात्ताप प्रकट कर 'सम्राट्की जय' घोषणा करे या तोपसे अुड़ा दिया जाय!" देशभक्त पश्चात्ताप क्यों करने लगा? अतः अुसे सम्राट्के सैनिकोंने जंजीरमें कसकर तोपके संमुख खड़ा कर दिया।

रक्षाके लिये अंतिम वार फिर कहता हूँ, 'सम्राटकी जय' घोषणा कर पश्चात्ताप कर ले।"

सम्राट्के प्रतिनिधिने कहा—"अपराधी, न्यायकी रक्षाके लिये अंतिम बार फिर कहता हूँ, 'सम्राट्की जय' घोषणा कर पश्चात्ताप कर ले।"

मुस्कराते हुअे देशभक्त बंदीने कहा—"तुम अपना काम करो, मुझसे पश्चात्तापकी आशा व्यर्थ है। तुम मुझसे 'सम्राट्की जय' कहलानेके लिये क्यों मरे जा रहे हो? सच्चा सम्राट् कहाँ है? तुम्हारे कहनेसे संसारके लुटेरेको मैं कैसे सम्राट् मान लूँ? सम्राट् न्यायका गला घोंट सकता है? सम्राट् रक्तका प्यासा हो सकता है? भाअी, तुम जिसे सम्राट् कहते हो, अुसे मनुष्य और मनुष्यताके अुपासक राक्षस कहते हैं? फिर सम्राट्की जय-घोषणा कैसी! तुम मुझे तोपसे अुड़ा दो। अिसीमें सम्राट्का मंगल है। अिसीसे अुसके पापोंका घड़ा फूटेगा और अुसे मुक्ति मिलेगी।"

देवमंडलके बीचमें बैठी हुअी माता मनुष्यताकी गोदमें बैठकर देशभक्तने और साथ ही त्रिंशत् कोटि देवताओंने देखा—पंचतत्वके अेक पुतलेको अत्याचारके अुपासकोंने तोपसे अुड़ा दिया।

अुस पुतलेके अेक अेक कणको देवताओंने मणिकी तरह लूट लिया। बहुत देरतक देवलोक 'देशभक्तकी जय!' से मुखरित रहा।

कठिन शब्दार्थ

बिसाती : पृष्ठ १–५

बिसाती—चूड़ी, सुआी, धागा आदि सामान बेचनेवाला
सौरभ—सुगंध
तलहटी—पहड़ीके नीचेकी ज़मीन
स्निग्ध—भीगा हुआ, चिकना
दाड़िम—अनार
समीरण—वायु
झुरमट—पेड़-पौधोंका समूह, कुंज
अवगुंठन—परदा, घूँघट
निस्पंद—गतिहीन, निर्जीव-से
अलकें—लटकते बाल, जुल्फें, लटें
गुंजान—घनी, बहुत
अभिभूत—पराजित, वशीभूत
आगा—साहब, प्रतिष्ठित
काफ़िला—यात्रियोंका समूह
क्रंदन—रोना
प्रेयसी—प्रियतमा
कानन—बन
पालतू—पाला हुआ
कोहकाफ़—सुंदर लोगों व परियोंके रहनेका काल्पित पहाड़

प्रायश्चित्त : पृष्ठ ५–१२

कबरी—सफ़ेद रंगपर काले-पीले दागवाली
मायका—स्त्रियोंके माता-पिताका घर
करधनी—कमरका आभूषण
छक्के-पंजे—चालबाजी
ऊँघना—नींद लगना
जिन्स—सामान
नदारद—गायब नष्ट
पर पकड़ना—आदत लगाना
दुश्वार—मुश्किल
बालाअी—मलाअी
कठहरा—पिंजड़ा
सरगर्मी—तेजी
फ़ासिला—अंतर
हौसला—अुत्कंठा, लालसा
ताक—आला
चंपत—चलता, गायब
ताता बँधना—सिलसिला जारी होना
रुँआसी—रोअी-जैसी, रोनी
अखरेगा—खटकेगा
महरी—घरकी दासी
फ़र्श—ज़मीन

कविका त्याग : पृष्ठ १४-२१

कुम्हलाया—मुरझाया
रौनक— चमक—दमक
थाह—अन्दाज
ओछापन—छुटाअी, क्षुद्रता

कारबंकल—फोड़ेकी बीमारीका नाम
रेतकी दीवार खड़ी करना—
असंभवको संभव सोचना
कलेजेपर अंगारे रखना—बहुत
दुखी होना
आकाश सिरपर उठाना—
दुःखसे ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाना
वहम—शक, झूठा संदेह
जोंक—रक्तचूसनेवाला कीड़ा
गहन—गहरा
विशद—विस्तृत
करतूत—करनी
किरकिरा—बेमज़ा
निकृष्टतर—नीच
चीत्कार—करुण पुकार
कलेजा मुँहको आना—बहुत
दुःख होना

शत्रु : पृष्ठ ३१-३५

पुंगी—बर्मी बौद्ध भिक्षुक
चर—जासूस, अनुचर

देवसेना : पृष्ठ ३५-४९

बीच—समुद्रका किनारा
शक्ल—सूरत
करघा—कपड़े बुननेका औज़ार
मेख़—खूँटी, कील
तनख्वाह—वेतन
धूर्त—चालक, बदमाश
हक़ीक़त—तथ्य, असलियत
तलाशी—जाँच
उद्वेग—आवेश
सुलह—समझौता
बँटवारा—बाँटना
बंधक—गिरवी
यार—दोस्त
मदों—विभागों, खातों
सब्र—धैर्य
मेठ—मजदूरोंका सरदार
जुरमाना—दण्ड
प्रतिवाद—विरोध, खंडन
थामकर—रोककर
किंकर्तव्यविमूढ़—कर्तव्य-बुद्धिसे
भ्रष्ट, घबराया हुआ
ठौर—जगह
जच्चा—प्रसूता स्त्री

ठाकुरका कुआँ : पृष्ठ ४९-५२

सिरा—छोर, किनारा
मैदानी बहादुरी—खुल्लमखुल्ला
युद्धमें वीरता
नाजिर—अदालतका बड़ा मुंशी
मोहतमिम—व्यवस्थापक
बेपैसे-कौड़ी—मुफ्त

धुँधली—अस्पष्ट, कुछ कुछ अँधेरी
जगत—कुअेंके चारों ओरका चबूतरा
रिवाजी पाबंदी—प्रचलित प्रथाका बंधन
मजबूरी—लाचारी, विवशता
गलेमें तागा डाल लेते हैं—ऊँची जातिके द्विज हैं
छटा—शोभा, दीप्ति
जाल-फरेब—धोखा
नानी मरना—परेशान होना
साँप लोटना—ओर्ष्यासे बहुत दुखी होना
गजब—अपूर्व, विलक्षण
साया—छाया
बेगार—मुफ्तमें लिया गया काम
दबे पांव—आहिस्तेसे, चुपकेसे
सूराख़—छेद
शहज़ोर—बलवान
हलकोरा—लहर

ताओी : पृष्ठ ५४-६८

ताअू—पिताके बड़े भाई
ताअी—ताअूकी पत्नी
चुहलबाज़ी—खुशी मनानेका भाव
मटकाकर—मोड़कर, चमककर
आढ़त—दूसरेके मालकी बिक्रीका काम
अपना ही ओटना—अपनी ही बात कहते रहना
पोच—तुच्छ
चोली-दामदानका-सा—हिला-मिला
नितांत—बिल्कुल
झेंपना—शरमाना
मूँजी—कंजूस
आशुकवि—शीघ्र कविता करनेवाला
निर्दिष्ट—बताया हुआ, निश्चित
ओसारा—बरामदा, दालान
फुर्ती—तेजी
हिंडोला—झूला
बावजूद—तिसपर भी

चचेरे भाओी : पृष्ठ ६९-७९

बादशाहत—साम्राज्य
साख—प्रतिष्ठा विश्वास
निहायत—बिल्कुल
नाज—धान्य
छक्के छुड़ाना—परेशान कर देना
आलीशान—शाही
रुक्का—आर्डर-चिट्ठी
चाकन्ने—होशियार, सावधान
अलगौझा—बँटवारा
पुश्त—पीढ़ी
बुलंद—ज़ोरकी

शेखी—खोर-झूठी शान झाड़नेवाला
जिमाना—खाना खिलाना
बुद्धू—गँवार
मक्कार—चालाक
खातिर-तवाज़ा—आव-भगत, सम्मान

महेश : पृष्ठ ७९–१००

बरसगांठ—जन्म-दिन
दिगंत—क्षितिज
दरार—फटी जगह
सर्पिल—सर्पके समान
सिवान—सीमान्त हद
सटा हुआ—लगा हुआ, मिला
पगहा—पशुको बांधनेकी रस्सी
दँवरी—खलिहानमें बैलोंसे कुचलवाकर अनाज तैयार करना
पुआल—धान आदिके सूखे डंठल
खलिहान—फसल काटकर रखनेका स्थान
आंटी—लम्बी घासका गट्ठा
खत्ती—अनाज रखनेका गड्ढा
हट्टा—बाज़ार
विवर्ण—रंग-रहित
खर—घास
सहनकी—मिट्टिका छोटा बरतन
कांजीहौस—जानवर बंद रखनेकी सरकारी जगह, घेरा
रेहन—गिरवी
चॉप—दबाव
श्रान्त—थका हुआ
मुबारक—शुभ, अच्छा
निगोड़े—अभागे
बल्लियों उछलना—खुशीसे-कूदना—फाँदना
गिरगिट—रंग बदलनेवाला जानवर
भृकुटी—भौंहे
तिक्त—कड़ुवा
गुस्ताखी—शरारत, दुस्साहस
प्यादा—सिपाही
विस्मृत—भूला हुआ
आर्त—दुःखी
निर्निमेष—बिना पलक गिराये,
खचित—भरा हुआ, जड़ा हुआ

काकी : पृष्ठ १००–१०३

कुहराम—विलाप, रोना पीटना
आर्द्रता—गीलापन
सकपकाकर—घबराकर
मुखबिर—जासूस

देशभक्त : पृष्ठ १०३–१०८

कारण—बाग़
कारागार—जेल
कण—ज़र्रा